९ जुलाई १९९५
वर्ष : ६
अंक : ३१
गुरुपूर्णिमा विशेषांक
ऋषि प्रसाद
Rs.7

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ६
अंक : ३१
९ जुलाई १९९५
सम्पादक : के. आर. पटेल
मूल्य : सात रूपये

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में

वार्षिक	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 30/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 40/-
आजीवन	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 300/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 400/-

विदेशों में

वार्षिक	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 18
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 24
आजीवन	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 180
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 240

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली एवं भार्गवी प्रिन्टर्स,
राणीप, अहमदाबाद में छपाकर प्रकाशित किया ।

'ऋषि प्रसाद' का प्रकाशन अब से मासिक होगा । कृपया पेज ४८ पर अवश्य देखें ।

अनुक्रम

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें ।

अब तो अलख जग जाने दो...

गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
नश्वरता से मुँह मोड़ सकूँ ।
शाश्वत की शरण में आने दो ॥
राग द्वेष भय हट जाए ।
मम चित्त अचिन्त्य हो जाए ॥
वह जान सके पहिचान सके ।
वह आत्मतत्त्व पा जाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
मैं बूँद प्रभो तुम हो सागर ।
मैं रश्मि प्रभो तुम प्रभाकर ॥
पूरण ब्रह्म प्रकाशी गुरु ।
स्पर्श चरणरज पाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
न हो माया से विचलित मन ।
यह देह भ्रमित और मिथ्या तन ॥
क्षणभंगुर से नाता काटो ।
और परम तत्त्व मिल जाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
निर्द्वन्द्व निःसंग असंग बनूँ ।
सम सुख दुःख मान प्रसन्न बनूँ ॥
चौरासी में आना न पड़े ।
वह आतम तत्त्व महकाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
गुरु क्षण क्षण बीता जाए है ।
मनुआ कुछ ना कर पाए है ॥
भक्तिभाव की मानुष तन में ।
अब तो अलख जग जाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
पातकी मूर्ख अल्पज्ञ रहा ।
यह जीवन व्यर्थ गँवाय रहा ॥
जीवन के बाकी साँसों को ।
प्रभु की लय में बह जाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥
सद्गुरुदेव मिलन में देर भई ।
तन की क्षमता सुसताय रही ॥
गुरुकृपा भरेगी शक्ति स्वयं ।
गुरुद्वार गुरु आ जाने दो ॥
गुरुदेव कृपा कर दो मुझ पर ।
मुझे अपनी शरण में आने दो ॥

गुरुपूर्णिमा महोत्सव

गुरुपूर्णिमा महोत्सव पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में दिनांक ११ जुलाई १९९५ को सायं ४ बजे तक इन्दौर में संत श्री आसारामजी आश्रम, बिलावली तालाब के पास खंडवा रोड़, इन्दौर (म.प्र.) में तथा दिनांक १२ जुलाई को अहमदाबाद आश्रम में आयोजित होगा ।

गुरुपूजा क्यों ?

हमारी पावन संस्कृति में गुरुपूजन की, आचार्योपासना की एक अत्यधिक मधुर परम्परा है । गुरु का पूजन उनके ज्ञान का पूजन, आदर्शों का पूजन, ब्रह्मज्ञान का पूजन, सत्य का पूजन, उनके अनुभवों का पूजन, विचारों का पूजन तथा उनकी देह में जो विदेही आत्मा है, परब्रह्म परमात्मा है उनका पूजन है । गुरुभक्ति अर्थात् ध्येय-भक्ति । जब तक मनुष्यों में ज्ञान की प्यास है, सत्यप्राप्ति की तड़प है, आदर्शों के लिये आदर भावना है तब तक संसार में गुरुभक्ति जीवित ही रहेगी ।

जब तक मनुष्यों में ज्ञान की प्यास है, सत्यप्राप्ति की तड़प हैं, आदर्शों के लिये आदर भावना है तब तक संसार में गुरुभक्ति जीवित ही रहेगी ।

गुरु का अर्थ शिक्षक या आचार्य नहीं है । शिक्षक अथवा आचार्य उस ज्ञान विशेष से हमारा थोड़ा-बहुत परिचय करा देते हैं । हम उनका हाथ पकड़कर ज्ञान के आँगन में आते हैं लेकिन गुरु हमें ज्ञान के सिंहासन पर ले जाते हैं । गुरु हमें उन ध्येयों के साथ एकरूप कर देते हैं जिन्हें उन्होंने प्राप्त किया है । विद्यालयों में तो विद्यार्थी प्रश्न करते हैं लेकिन गुरुभक्ति में बिना बोले ही शंकाओं का समाधान हो जाता है । बिना बोले ही गुरु सिखा देते हैं तथा बिना पूछे ही शिष्य सीख जाता है । गुरु अर्थात् उमड़ता हुआ ज्ञानसागर, जो सत्शिष्य का मुखचंद्र देखकर लहराने लगता है ।

गुरुभक्ति में बिना बोले ही शंकाओं का समाधान हो जाता है । बिना बोले ही गुरु सिखा देते हैं तथा बिना पूछे ही शिष्य सीख जाता है ।

सद्गुरु के महत्त्व को आँकना अत्यधिक दुष्कर है । गुरुप्राप्ति के अभाव में मनुष्य उसी प्रकार अपने भ्रमरूपी शरीर में अध्यास करता हुआ स्वयं को कर्त्ता-भोक्ता, सुखी-दुःखी व जन्मता-मरता मानता है, जैसे कि कुत्ता आईने में अपने ही प्रतिबिम्ब को दूसरा कुत्ता समझकर भौंकता रहता है अथवा उन्मत्त सिंह कुएँ में अपने प्रतिबिम्ब को ही दूसरा सिंह समझकर छलांग लगा देता है ।

सद्गुरु द्वारा तत्त्व का उपदेश करते ही अज्ञान से आवृत्त चित्त में ज्ञान ठीक उसी प्रकार जागृत हो जाता है जैसे कि निन्द्रा खुलते ही स्वप्नाध्यास निवृत्त हो जाता है । उनके तत्त्व स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होते ही अज्ञानांधकार में सदियों से भटकता चला आ रहा जीव क्षणभर में प्रकाशित हो जाता है । उनके दर्शन, स्पर्श और उपदेशों से शिष्य का कल्याण हो जाता है ।

भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं :

तद्विद्धि प्रणिपातेन
परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं
ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

'उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी ज्ञानी महापुरुषों के पास जाकर समझ । उनको साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी ज्ञानी महापुरुष तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश देंगे ।' (गीता : ४.३४)

गुरु के पास तो प्रणाम और सेवा ही ज्ञान के दो मार्ग होते हैं । विनम्रता ज्ञान का सच्चा प्रारम्भ है ।

शिष्य गुरु के पास खाली मन लेकर जाता है । जिस प्रकार कुएँ में से पानी लेना है तो बरतन को झुकना ही पड़ेगा, उसी प्रकार जो ज्ञान के सागर हैं, उनके सामने जब तक हम न झुकेंगे, तब तक हमें ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकेगा । भरने के लिये

झुकना ही पड़ता है । प्रगति करने के लिये झुकना ही पड़ता है ।

जिसके जीवन में कोई ब्रह्मज्ञानी गुरु नहीं, उसका जीवन तो संसारसागर में बिना नाविक के डोलनेवाली उस नाव के समान है जो कब डूब जाए, कोई भरोसा नहीं । ऐसा मनुष्य दुःखदायक, क्षणभंगुर और मलमूत्र से भरे अपवित्र देह में ही प्रीति करता हुआ जड़ पदार्थों के ज्ञान से अशांतिवर्धक तुच्छ सांसारिक भोगों की कामना लिये हुए पशुवत् नारकीय जीवन ही यापन करता है ।

जिसके पास गुरुकृपारूपी धन है वह सम्राटों का सम्राट है । जो गुरुदेव की छत्रछाया के नीचे आ गये हैं, उनका जीवन चमक उठता है । गुरुदेव ऐसे साथी हैं जो शिष्य के आत्मज्ञान के पथ पर आनेवाली तमाम बाधाओं को काट-छाँटकर उसे ऐसे पद पर पहुँचा देते हैं, जहाँ पहुँचकर फिर वह विचलित नहीं होता ।

जिस प्रकार कुएँ में से पानी लेना है तो बरतन को झुकना ही पड़ेगा, उसी प्रकार जो ज्ञान के सागर हैं, उनके सामने जब तक हम न झुकेंगे, तब तक हमें ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकेगा । भरने के लिये झुकना ही पड़ता है ।

ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का आश्रय प्राप्त करनेवाले मनुष्य परम सद्भागी हैं । सद्गुरु की गोद में पूर्ण श्रद्धा से अपना अहंरूपी मस्तक रखकर निश्चिन्त होकर विश्राम पानेवाले सत्शिष्य का लौकिक एवं आध्यात्मिक, दोनों ही मार्ग तेजोमय हो जाता है । सद्गुरु में परमात्मा का अनन्त सामर्थ्य होता है । उनके परम पावन देह को छूकर आनेवाली हवा भी जीव के अनन्त जन्मों के पापों का निवारण करके क्षण भर में ही उसे आह्लादित कर सकती है तो उनके श्रीचरणों में श्रद्धा-भक्ति रखनेवाले सत्शिष्य के कल्याण में क्या कमी रह सकती है ?

जिसके जीवन में कोई ब्रह्मज्ञानी गुरु नहीं, उसका जीवन तो संसारसागर में बिना नाविक के डोलनेवाली उस नाव के समान है जो कब डूब जाए, कोई भरोसा नहीं ।

श्रीमद्भागवत में जड़भरतजी कहते हैं :

रहूगणैतत्तपसा न याति
न चेज्यया निर्वपणाद् गृहाद्वा ।
नच्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना-
महत्पादरजोऽभिषेकम् ॥

(भागवत : ५.१२.१२)

'रहूगण ! महापुरुषों के चरणों की धूलि से अपने को नहलाये बिना केवल तप, यज्ञादि वैदिक कर्म, अन्नादि के दान, अतिथिसेवा, दीनसेवा आदि गृहस्थोचित धर्मानुष्ठान, वेदाध्ययन अथवा जल, अग्नि या सूर्य की उपासना आदि किसी भी साधन से यह परमात्म-ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता ।'

विवेकानंद कहते थे : 'आध्यात्मिक गुरु के देने पर आत्मा को जो ज्ञानप्राप्त होता है, उससे उच्च एवं पवित्र वस्तु और कुछ नहीं है । वह पुस्तकों द्वारा प्राँप्त नहीं हो सकता । तुम अपने सिर को दुनिया के चारों कोनों में हिमालय, आल्प्स, काकेशस पर्वत पर अथवा गोवी या सहारा की मरुभूमि या समुद्र की तली में जाकर भटका लो परन्तु गुरु के मिले बिना तुम्हें वह ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता । गुरु की खोज करो, बालक के समान उनकी सेवा करो, उनके प्रसाद (प्रभाव) को ग्रहण करने के लिये अपना हृदय खोले रखो ।''

ऊपरी व्यवहारमात्र से 'गुरु' की कसौटी करना सबसे बड़ी मूर्खता है । समुद्र के पास जाने पर जल की ऊपरी सतह पर मात्र कचरा-कूड़ा, झाग इत्यादि दिखते हैं लेकिन मोती तो उसके पेट में रहता है, उसी प्रकार गुरु भी सागररूप हैं, उनके पास जाकर अथवा उनके ऊपर के एक-दो व्यवहार से हमारी नजरें उनकी पहचान नहीं कर सकती

क्योंकि ज्ञानरूपी मोती तो उनके हृदय में होता है ।

श्रीमद्भागवत में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

'पचास वर्ष की निष्कपट भक्ति से भी हृदय का अज्ञान दूर नहीं होता है । हृदय शुद्ध जरूर होता है पर अज्ञान नहीं मिटता । ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष के एक मुहूर्त के समागम से, उनके चरणों की एक मुहूर्त की सेवा से ही हृदय का अज्ञान दूर हो सकता है । धातु से बनी मूर्ति में भगवद्बुद्धि, जल से भरे हुए जलाशयों में तीर्थबुद्धि, हाड़-मांस के पुत्र-परिवार में मेरेपने की बुद्धि करते हैं परन्तु महापुरुषों में जिनकी पूज्यबुद्धि नहीं है वे मनुष्य होने पर भी पशुओं में भी नीच गधा हैं ।

(श्रीमद्भागवत : १०.८४. ११,१२,१३)

सद्गुरु में परमात्मा का अनन्त सामर्थ्य होता है । उनके परम पावन देह को छूकर आनेवाली हवा भी जीव के अनन्त जन्मों के पापों का निवारण करके क्षण भर में ही उसे आह्लादित कर सकती है तो उनके श्रीचरणों में श्रद्धा-भक्ति रखनेवाले सत्शिष्य के कल्याण में क्या कमी रह सकती है ?

'मैं कौन हूँ ?' 'मेरा व जगत् का क्या संबंध है ? मेरा कर्त्तव्य क्या है ? जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधि-दुःख-बंधन, इन सभी से मुक्त होकर शाश्वत् शांति का परम पद कैसे प्राप्त हो ?' आदि विषयों का ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है, जिसे प्राप्त करना ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है । किन्तु यह तत्त्वज्ञान तथा ईश्वर से मुलाकात बिना सद्गुरुकृपा के नहीं हो सकती है ।

जो बात दवा भी न कर सके,
वह बात दुआ से होती है ।
जब कामिल मुर्शिद मिलते हैं,
तो बात खुदा से होती है ॥

'कामिल मुर्शिद' अर्थात् सद्गुरु जब मिल जाते हैं तो ईश्वरीय मस्ती का मजा ही कुछ निराला हो जाता है । संसार के सब लोग एक-दूसरे को अंधेरे में गिराते हैं ।

ऊपरी व्यवहारमात्र से 'गुरु' की कसौटी करना सबसे बड़ी मूर्खता है । समुद्र के पास जाने पर जल की ऊपरी सतह पर मात्र कचरा-कूड़ा, झाग इत्यादि दिखते हैं लेकिन मोती तो उसके पेट में रहता है ।

संसार के सम्बन्धी सब स्वार्थ के ।
पक्के विरोधी हैं ये परमार्थ के ॥

सद्गुरु दीक्षा द्वारा शिष्य के मन की प्राकृत अवस्था में आध्यात्मिक चित्त की एक ऐसी असाधारण शक्ति प्रदान करते हैं कि शिष्य के मन का अन्धकार नष्ट होकर उसमें ज्ञानरूपी प्रकाश का उदय हो जाता है । संसार के लोग जीव को बन्धन में बांधते हैं लेकिन एक सद्गुरु ही तो हैं जो जीव को बंधनों से मुक्ति दिलवाकर ब्रह्म में प्रतिष्ठित करते हैं, इसलिये जीवन में यदि उस शाश्वत् सत्य का ज्ञान पाना है तो सद्गुरु की शरण जाना ही पड़ेगा ।

जैसे वृक्ष की नींव को सींचने से समस्त शाखा, पत्र सहित वृक्ष हरा-भरा रहता है लेकिन केवल पत्तों को अमृत से भी सींचते रहो तब भी उसे सूखने से नहीं, बचाया जा सकता, वैसे ही सद्गुरु के पूजन में सारी पूजाएँ समाहित हो जाती हैं । लेकिन यदि सभी देवी-देवताओं का पूजन करना चाहो तब भी कोई न कोई छूट ही जाएगा ।

'श्रीगुरुगीता' में भगवान शंकर पार्वती से कहते हैं :

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ॥

'ब्रह्मा, विष्णु और शिव सहित समग्र जगत् गुरुदेव में समाविष्ट है । गुरुदेव से अधिक और कुछ भी नहीं है, इसलिये गुरुदेव की पूजा करनी चाहिये ।'

जिस ज्ञान की प्राप्ति के बाद मोह पैदा न हो, दुःख का प्रभाव न पढ़े एवं परब्रह्म की प्राप्ति

हो जाय ऐसा ज्ञान गुरुकृपा से ही मिलता है, उसे प्राप्त करने की भूख जगानी चाहिये । तत्परता से गुरुओं के साथ दिल मिलाने की कला यदि शिष्य में आ जाए तो वे परब्रह्म परमात्मा के साथ पलभर में उसका दिल मिला देते हैं । परमात्मा का मिलना सहज है लेकिन उससे मिलानेवालों का मिलना कठिन है । गुरुजन कहा करते हैं :

हमसे कोई सीखे
तेरे मिलने की अदायें ।
दुनिया तो यह कहती है
कि मुमकिन ही नहीं है ॥

'भले ही संसार यह कहता रहे कि तेरा मिलना नहीं हो सकता पर जो मिलना चाहे वह हमसे मिलने के ढंग सीख ले, फिर तो वह आनंद सहज ही मिल सकता है ।'

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ॥

'जिसको ईश्वर में उत्तम भक्ति होती है, जैसी ईश्वर में वैसी ही भक्ति जिसको गुरु में होती है, ऐसे महात्माओं को ही यहाँ कही हुई बात समझ में आएगी ।'

कई लोग सद्गुरु का महत्त्व ही नहीं समझते बेचारे । वे ईश्वर और सद्गुरु को पृथक्-पृथक् समझते हैं । ऐसे लोगों को कबीरजी ने कहा है :

कबीरा वे नर अंध हैं,
जो हरि को कहते और, गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर हैं, गुरु रूठे नहीं ठौर ॥

वे हतभागी सचमुच अंधे हैं जो सद्गुरु को ईश्वर से अलग मानते हैं । उन मूर्खों को पता ही नहीं कि भगवान रूठ जावें तो गुरु संभाल सकते हैं लेकिन यदि गुरु रूठ जावें तो भगवान भी नहीं बचा सकते हैं । भगवान भी जब यहाँ अवतार लेते हैं तो उन्हें भी गुरुदेव की शरण में ही आना पड़ता है ।

खोज लो किसी राहनुमाको और उनके कदमों में अपना सिर रखकर समर्पण कर दो । उन्हें तुम्हारे धन-दौलत-संपति जैसे नश्वर पदार्थों की चाह नहीं, उन्हें तो बस सत्‌शिष्यों की तलाश रहती है, जिसे वे अपना खजाना लुटा सके ।

इसलिये खोज लो किसी राहनुमा को और उनके कदमों में अपना सिर रखकर समर्पण कर दो । उन्हें तुम्हारे धन-दौलत-संपत्ति जैसे नश्वर पदार्थों की चाह नहीं, उन्हें तो बस सत्‌शिष्यों की तलाश रहती है, जिन्हें वे अपना खजाना लुटा सकें ।

हे मानव ! जिन्दगी के उद्देश्य को समझ ले भैया ! उसकी कीमत मत आँक । तेरा निष्काम प्रेम और सेवा ही तुझे गुरुतत्त्व का खजाना प्राप्त करवा देगा ।

मकसदे जिन्दगी समझ,
कीमते जिन्दगी न देख ।
इश्क ही खुद है बन्दगी,
इश्क में बन्दगी न देख ॥

यही प्रेमाभक्ति पराभक्ति है । गीता कहती है : 'मद्भक्तिं लभते पराम् ।'

पूर्णता... सहजावस्था... जीवन्मुक्ति...

❀

सत्‌शिष्य अपने जीवन की डोर जब किसी तत्त्ववेत्ता ब्रह्मनिष्ठ सद्गरु के हाथों में सौंपकर पूर्ण समर्पित हो निश्चिन्त हो जाता है तो करुणाकृपा की मूर्ति वे सद्गुरु सत्‌शिष्य को अपने अनुभव की धारा में बहा ले जाते हैं । शिष्यत्व से उठाकर वे उसे पूर्ण गुरुत्व में प्रतिष्ठित कर देते हैं, जीव में से उसे ब्रह्म और मानव में से उसे महेश्वर बना देते हैं ।

भूल सुधार : 'ऋषि प्रसाद' अंक ३०, मई-जून १९९५ में पेज १३ पर 'जब-जब होइ धरम कै हानी...' के अर्थ के बाद (श्री रामचरित० : बालकांड, दोहा १२१) पढ़े ।

गुरुकृपा और शक्तिपात

दिन गुजरते ही चले जाते हैं ।
लोग मरते ही चले जाते हैं ॥
जानते हैं कि ये गफलत के हैं काम,
फिर भी करते ही चले जाते हैं ॥

अब थम जाओ... रुक जाओ और अपने आत्मा में आओ । ब्रह्मवेत्ता संतों की महफिल में आओ । हरिकीर्तन और ध्यान में आओ । हरि के नाते समाज सेवा में आगे आओ इससे ही समाज का, देश का मंगल होगा ।

आत्मतृप्तस्य मानवः
तस्य कार्यं न विद्यते ।

जो अपने आप में तृप्त है उसके लिये कोई कर्त्तव्य शेष नहीं है । उसका तो सहज स्वभाव एवं स्वनिर्मित विनोद संसार का मंगल करने का होता है । हजार-हजार विघ्न-बाधाओं के बीच भी वह मुस्कुराता है । रामराज्य के बदले रामजी को वनवास हो जाता है तो रामजी के चित्त पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । श्रीकृष्ण के जीवन में बकासुर, शकटासुर, धेनुकासुर का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

लख चंदा चढ़े चाहे सूरज चढ़े हजार ।
ऐते चांदण ना होंदा गुरु बिन घोर अंधार ॥

हजारों सूर्य प्रकाशित हो जाएँ, लाखों चन्द्रमाओं की चमक हो जाय फिर भी सच्ची रोशनी तो गुरु के बिना नहीं मिल सकती । मिथ्या जगत के लिये मिथ्या रोशनी तो चाहिये लेकिन अपने लिये तो सच्ची रोशनी चाहिये, आत्मप्रकाश चाहिये, आत्मसुख-आत्मानन्द चाहिये । अपूर्ण प्रकृति की चाहे कितनी भी चीजें मिल जाय किन्तु इससे मन को पूर्ण सुख नहीं मिलता, इसीलिये सब दुःखी पाये जाते हैं । कोई बिरले ही सुखी होते हैं, जिन पर सद्गुरु की रहमत होती है, जिन पर सद्गुरु की निगाह होती है, जिनकी अन्तर्आत्मा पर सद्गुरु की करुणा-कृपा की वृष्टि होती है ।

फिरत-फिरत प्रभु आइयो, परयो तव शरणाय ।
नानक की प्रभु विनती, तू अपनी भक्ति लाय ॥

परम पुरुष, ब्रह्मवेत्ता और परमात्मा से भक्ति न माँगें तो किससे माँगें ? शिष्य गुरु की योग्यता से प्यार करता है लेकिन गुरु शिष्य की आत्मा से प्रेम करते हैं । शिष्य तो कुछ कुछ ही देता है लेकिन गुरु तो अपने आपको दे डालते हैं । रामकृष्ण ने अपने आपको दे डाला था नरेन्द्र को फिर भी रामकृष्ण पूरे के पूरे ही थे । श्रीकृष्ण ने अपने आप को दे डाला था अर्जुन को लेकिन श्रीकृष्ण पूर्ण ही थे और अर्जुन को बाकी कुछ नहीं बचा था । शिवाजी महाराज को समर्थ रामदास ने अपना आपा दे डाला था फिर भी रामदास पूरे के पूरे और शिवाजी को भी कमी नहीं रही थी ।

मिथ्या जगत के लिये मिथ्या रोशनी तो चाहिये लेकिन अपने लिये तो सच्ची रोशनी चाहिये, आत्मप्रकाश चाहिये, आत्मसुख - आत्मानन्द चाहिये । अपूर्ण प्रकृति की चाहे कितनी भी चीजें मिल जाय किन्तु इससे मन को पूर्ण सुख नहीं मिलता, इसीलिये सब दुःखी पाये जाते हैं । कोई बिरले ही सुखी होते हैं जिन पर सद्गुरु की रहमत होती है ।

गुरुकृपा वह चीज है जिसमें देने-लेने का सौदा निगाह मात्र से हो सकता है, संकल्पमात्र से हो सकता है, स्पर्श मात्र से अथवा ध्यान मात्र से हो सकता है । चार तरीकों से यह लेन-देन हो जाता है । शिष्य अपना अहंकार, पाप-ताप श्रद्धा से छोड़ता है और गुरु अपनी करुणा कृपादृष्टि मात्र से दे देते हैं ।

दीक्षा का मतलब यह कि शिष्य अपना दुःख, दरिद्रता, संकीर्णता, चिन्ता गुरु के चरणों में सौंप दे और गुरु अपना सुख, शांति, सामर्थ्य और व्यापकता शिष्य को दे दें । ऐसे सद्गुरु जब तक नहीं मिलते तब तक कितने भी तप, जप आदि करके शरीर सूखा लो, आत्मतत्त्व की प्राप्ति नहीं होगी ।

१२-१२ वर्षों तक मौन रखने वाले संतों को मैं जानता हूँ। उन्होंने दो बार मौन (२४ वर्ष तक) रखे, नर्मदा परिक्रमा की तथा दूसरा भी बहुत कुछ किया उन्होंने। उनके माता-पिता भी उच्चकोटि के साधक थे। फिर भी समर्थ सद्गुरु के अभाव में आज तक उनकी यात्रा पूर्ण न हो सकी।

दीक्षा का मतलब यह कि शिष्य अपना दुःख, दरिद्रता, संकीर्णता, चिन्ता गुरु के चरणों में सौंप दे और गुरु अपना सुख शांति, सामर्थ्य और व्यापकता शिष्य को दे दें।

आज से २०-२५ वर्ष पहले मैंने कुंभ में एक साधु को देखा था जो एक हाथ ऊँचा करके चल रहा था। मुझे यह देखकर जिज्ञासा हुई और मैं उसके पास पहुँच गया। मैंने पूछा - ''आप काफी देर से एक हाथ ऊँचा करके चल रहे हैं, क्या कारण है ?''

उसने बताया : ''स्वामीजी ! लोग मुझे खड़ेश्वरी महाराज कहते हैं। मैंने १२ वर्ष हाथ खड़ा रखते हुए तपस्या की और सोता भी इसी तरह से था। तपस्या तो पूरी हो गई लेकिन अब हाथ नीचे ही नहीं होता क्योंकि नसों में रक्तप्रवाह बन्द होने से वे सूख गई।''

और भी कई साधु कुंभ के मेलों में कई प्रकार के चमत्कार दिखलाते रहते हैं लेकिन ध्यान योग और कुंडलिनी योग का रास्ता कुछ निराला ही है। इसमें बाहर के व्यक्तियों को दिखाने के लिये कोई साधन नहीं करना पड़ता है फिर भी बाहर के व्यक्ति आकर्षित हुए बिना रहेंगे भी नहीं, यह पूर्ण सत्य है।

आपको शक्तिपात दीक्षा किसी समर्थ सद्गुरु द्वारा मिल गई और आप लग गये तो इसी जन्म में, कुछ ही वर्षों, कुछ ही महीनों में आप बहुत सारी ऊँचाइयों का अनुभव कर सकते हैं।

आपको शक्तिपात दीक्षा किसी समर्थ सद्गुरु द्वारा मिल गई और आप लग गये तो इसी जन्म में, कुछ ही वर्षों, कुछ ही महीनों में आप बहुत सारी ऊँचाइयों का अनुभव कर सकते हैं। अवधि शिष्य की तत्परता, श्रद्धा, रुचि और आहार-व्यवहार पर निर्भर करती है कि वह कितने समय में, कितनी ऊँचाई को प्राप्त कर लेता है। अगर इस जन्म में नहीं पहुँचा तो वह महाम कुंडलिनी शक्ति देर-सबेर साधक को अपने साध्य मिला ही देती है।

कुंडलिनी शक्ति नाभि से नीचे मूलाधार केन्द्र साढ़े तीन फेरा मारकर सर्पा में सुषुप्तावस्था में रहती तपस्या, प्राणायाण, आ इत्यादि गुरुपदिष्ट तरीकों से जाग सकती है। पूर्वकाल में ध्यान-भजन किया हो या अ निर्दोष सच्चाई का व्यवह किया हो तो उसमें भी वह ज सकती है। जब वह चिदाव जागृत होती है तो नस-नाड़ि के पुराने मल, पुराने रोग और भविष्य में होने व रोग के कणों को दूर कर देती है तथा संस्कारों भी मिटा देती है। कुंडलिनी योग की महिमा का ज्ञानेश्व महाराज ने भी ज्ञानेश्वरी गीता के छठे अध्याय दसवें श्लोक से बड़ा ही सुन्दर एवं विस्तृत वर्ण किया है।

श्रीमद् भागवत के तीस स्कंध के २८ वें अध्याय के छ श्लोक में कपिलजी ने मात देवहूति को मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपुर आदि चक्र के ध्यान कर के लिये इस कुंडलिनी योग व वर्णन किया है।

स्वधिष्ण्यानामेकदेशे
मनसा प्राणाधारणम्।

जब यह महामाया कुंडलिन शक्ति जागृत होती है तो अनसुने-अनदेखे शास्त्रों क रहस्य प्रकट होने लगता है। उसके मुख से शास्त्र के गूढ़ रहस्य प्रस्फुटित होने लगते हैं। फिर वह ज बोलता है, वह शास्त्र बन जाता है। कबीरजी बोल तो बीजक बन गया, नानकजी बोले तो ग्रंथ साहिब बन गया, मोहम्मद बोले तो कुरआन बन गया, रामकृष्ण बोले तो वचनामृत बन गया।

महापुरुषों द्वारा शक्तिपात वर्षा के माध्यम से जब साधक की कुंडलिनी शक्ति जागृत की जाती है तब उनके द्वारा मुख्यत: तीन स्थानों पर - मूलाधार केन्द्र, हृदय तथा भ्रूमध्य में से जिनमें साधक की स्थिति हो - शक्तिपात होता है । जहाँ साधक के मन और प्राण का अंश विशेष होगा, वहाँ यह जागती है ।

कुंडलिनी शक्ति नाभि से नीचे मूलाधार केन्द्र में साढ़े तीन फेरा मारकर सर्पाकार में सुषुप्तावस्था में रहती है । तपस्या, प्राणायाण, आसन इत्यादि गुरूपदिष्ट तरीकों से वह जाग सकती है ।

रामकृष्ण के पास नरेन्द्र गये और कहा : ''मुझे ईश्वर की प्राप्ति करनी है । आपको ईश्वर मिले हैं ? क्या मुझे मिल सकते हैं ? यदि हाँ तो कृपया मुझे दीक्षा दीजिये, कृपा कीजिये ।'' बड़ा ही अनुनय-विनय किया ।

रामकृष्ण ने सोचा कि यह विचारवान है, बुद्धिमान है लेकिन बुद्धिमान के साथ-साथ श्रद्धावान है कि नहीं, यह देखना चाहिये । रामकृष्ण ने कहा : ''चलो कमरे में और कमीज उतारो ।''

सद्‌गुरु कुछ देने से पहले शिष्य की तत्परता, श्रद्धा व योग्यता का परीक्षण करते हैं कि जो दिया जा रहा है शिष्य उसे सम्हालने के काबिल है कि नहीं ।

यद्यपि दीक्षा में कमीज उतारने की जरूरत नहीं है लेकिन सद्‌गुरु कुछ देने से पहले शिष्य की तत्परता, श्रद्धा व योग्यता का परीक्षण करते हैं कि जो दिया जा रहा है शिष्य उसे सम्हालने के काबिल है कि नहीं । नरेन्द्र ने कमीज उतार दी और रामकृष्ण ने धीरे से अपने पैर का अंगूठा हृदय पर स्पर्श कराया, नरेन्द्र में शक्तिपात का संचार हो गया ।

नरेन्द्र लिखते हैं : ''मुझे कुछ होने लगा और मैंने सोचा कि इस बूढ़े बाबा ने मुझे क्या कर दिया । अब कभी दक्षिणेश्वर नहीं जाऊँगा । फिर भी उनका कृपा प्रसाद मुझे बार-बार दक्षिणेश्वर की तरफ आकर्षित करता रहा । आज जब खेतड़ी के राजा घोड़े हटाकर स्वयं अपने हाथों से मेरा रथ खींच रहे हैं तो मुझे याद आता है कि ये सब मेरे गुरुदेव के कृपा प्रसाद का ही फल है ।''

जिनकी शक्तिपात करने की क्षमता विकसित हो जाती है, वे पुरुष जिस वस्तु को छू लेते हैं, वह प्रसाद हो जाती है । वे जहाँ चरण रखते हैं वह धरती भी उनके पवित्र परमाणुओं से युक्त हो जाती है । यहाँ तक कि वे वहाँ नहीं भी हों लेकिन फिर भी उनके उपयोग में आने वाली पादुकाएँ, करमंडल तथा अन्य वस्तुओं में हमारी श्रद्धा हो, आदरभाव हो तो वे भी हमारे लिये बहुत-बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं ।

कुंडलिनी शक्ति जागृत होने पर मूलाधार केन्द्र रूपान्तरित होने लगता है, जिसको कामकेन्द्र बोलते हैं । उसके रूपान्तरित होते ही काम राम में बदल जाता है । मोहनदास करमचन्द गांधी अपने पिता की मृत्यु के समय अपनी पत्नी के साथ बिस्तर पर थे, ऐसी स्थिति थी लेकिन प्रार्थना करते-करते, राम का जप करते-करते उनका काम केन्द्र राम में बदला और निष्कामता का उनके जीवन में प्राकट्य हुआ ।

निष्कामता से क्षमताएँ विकसित होती हैं । जो लोग सेवा करते हैं तथा बदले में शाबाशी चाहते हैं, अखबारों में नाम चाहते हैं, पुरस्कार चाहते हैं, मान या अधिकार चाहते हैं, वे सेवा के महत्त्व को जानते ही नहीं हैं । सेवा के गुप्त हीरे वाहवाही रूपी कंकड़ों के मूल्य बेच देते हैं । सच्चा सेवक तो चोरी छुपे भी सेवा कर लेता है ।

जैसे ईश्वर का बयान पूरा नहीं किया जा सकता वैसे ही यह ईश्वर की अभिन्न शक्ति भी अवर्णनीय है । जैसे दूध और दूध की सफेदी अभिन्न है, तेल और तेल की चिकनाहट अभिन्न है, पुरुष और पुरुष की शक्ति अभिन्न है वैसे ही सच्चिदानंद ब्रह्म की

आह्लादिनी शक्ति भी चैतन्य से अभिन्न है इसीलिये इसको परमात्मशक्ति कहकर 'जगदम्बे मात की जय' करके कहा गया है ।

शास्त्रों में आता है :

यावत्सा निद्रिता देहे
तावत् जीवः पशुर्यथा ।
ज्ञानं न जायते तावत्
कोटियोगविधैरपि ॥

'कुंडलिनी शक्ति जब तक मनुष्य शरीर में सुषुप्तावस्था में रहेगी, तब तक उसका व्यवहार पशुवत् रहेगा तथा वह परमतत्त्व का ज्ञान पाने में समर्थ नहीं रहेगा, चाहे वह करोड़ों योगाभ्यास ही क्यों न करता हो ।'

शिष्य गुरु की योग्यता से प्यार करता है लेकिन गुरु शिष्य की आत्मा से प्रेम करते हैं । शिष्य तो कुछ कुछ ही देता है लेकिन गुरु तो अपने आपको दे डालते हैं ।

शक्तिपात वर्षा के माध्यम से जब गुरुकृपा से कुंडलिनी शक्ति जागृत होती है तो शरीरस्थ सभी चक्रों का तथा ग्रन्थियों का भेदन होकर आन्तरिक शक्तियों का दिव्य खजाना बाहर निकल पड़ता है ।

गुरुकृपा वह चीज है जिसमें देने-लेने का सौदा निगाह मात्र से हो सकता है, संकल्पमात्र से हो सकता है, स्पर्श मात्र से अथवा ध्यान मात्र से हो सकता है ।

जिसके हृदय में गुरु के प्रति सर्वोत्कृष्ट श्रद्धा और प्रेम हो, वह पूर्ण योग्य हो तो उसे गुरु की शक्ति सहज ही, आसानी से प्राप्त हो जाती है । कबीरजी में यह गुरुपादुका के स्पर्श मात्र से जागृत हो गई थी, अमीर खुसरो ने सूफी संत निजामुद्दीन के जूतों में भी अहोभाव करके आनन्द पाया था । याज्ञवल्क्य से जनक ने, जनक से शुकदेव ने, वशिष्ठ से राम ने, राम से हनुमान ने, श्रीकृष्ण से अर्जुन ने ज्ञान प्राप्त किया था ।

यूरोप में इस बात पर बड़ा गर्व महसूस किया जाता है कि मैं अमुक व्यक्ति का शिष्य हूँ । सुकरात का शिष्य कहे जाने में प्लेटो अपने को धन्य मानता था । प्लेटो का शिष्य कहे जाने में अरस्तू अपने को कृतार्थ मानता था । इब्सन का अनुयायी कहा जाने में शाँ को बड़प्पन का अनुभव होता था तथा मार्क्स का शिष्य समझे जाने में लेनिन अपने को गौरवशाली समझता था ।

सद्गुरु जीवन की मिट्टी को माणिक-मोती बनाते हैं । वे पशु से मनुष्य बनाते हैं, वैचारिक शक्ति प्रदान करते हैं, सत्य दृष्टि देते हैं । इस प्रकार के सद्गुरु से किस प्रकार उऋण हो सकेंगे ? जिन्होंने बंदर से मनुष्य बनाये, पशु से पशुपति बनने का जादू सिखाया, उन सद्गुरु का ऋण किस प्रकार चुकाएँ ? किन शब्दों में उनका स्तवन करें ? उनका कितना वर्णन करें ? उन्हे कितना मानें ? उनकी कितनी प्रशंसा करें ?

ब्रह्मज्ञानी की मत कौन बखाने ।
नानक ! ब्रह्मज्ञानी की गति ब्रह्मज्ञानी जाने ।

ऐसे गुरुओं के चरणों में हमारे कोटि कोटि प्रणाम हो...

शिल्पी जब पत्थर की घड़ाई करता है तो वह क्रूर नजर आता है लेकिन उसी पत्थर में से जब प्रतिमा का सृजन होता है तो हजारों-लाखों शीश उस पाषाण-प्रतिमा के सम्मुख झुक जाते हैं । बढ़ई जब लकड़ी को छीलता है तो बुरा लगता है लेकिन उसी लकड़ी में से जब सुन्दर फर्नीचर व खिलौने बनते हैं तो हर किसी का मन मोह लेते हैं, ऐसे ही जब सद्गुरु शिष्य के दुर्गुणों, बुराइयों व बेवकूफियों को डाँटते-फटकारते हैं तो बुरे नजर आते हैं लेकिन उनकी डाँट-फटकार से जब शिष्य का जीवन पुष्प खिल उठता है तो वह सम्पूर्ण समाज में अपनी सौरभ महकाता रहता है । सद्गुरु मानव जीवन के सच्चे निर्माता होते हैं, वे मानवता में आई हुई दानवता को नष्ट कर मानव को महेश्वर बनाते हैं ।

करुणासिन्धु की करुणा

ईश्वर के मार्ग पर एकबार कदम रख ही दिये हैं तो चल ही पड़ना । पीछे न मुड़ना । जिज्ञासु के हृदय की पुकार होती है, पक्के मर्दों के दिल की आवाज होती है कि जो करना है सो करना है, जो पाना है सो पाना है । कण्ठगत प्राण आ जाय तो भी वापस नहीं मुड़ना है ।

जिज्ञासु के हृदय की पुकार होती है, पक्के मर्दों के दिल की आवाज होती है कि जो करना है सो करना है, जो पाना है सो पाना है । कण्ठगत प्राण आ जाय तो भी वापस नहीं मुडना है ।

ईश्वर के मार्ग पर कदम रखनेवाले वे ही लोग पहुँचते हैं जो दृढ़ निश्चयी होते हैं। परमात्मा के मार्ग पर वे ही वीर चल पाते हैं जिनके अन्दर अथाह उत्साह, महान् सहनशक्ति, विचित्र विचारबल होता है । वे ही इस मार्ग के पथिक हो पाते हैं ।

भोंय सूवाडुं भूखे मारुं उपरथी मारुं मार ।
एटलुं करतां जो हरि भजे तो करी नाखुं निहाल ॥

ऐसे निहाल कर देनेवाले सद्गुरु का सहारा जिन जिज्ञासु साधकों को मिल जाता है वे सचमुच धन्य हैं । सद्गुरु की महिमा अपार है । योगीश्वर देवाधिदेव भगवान शंकर मैया पार्वती से कहते हैं :

अज्ञानमूलहरणं जन्मकर्मनिवारकम् ।
ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं गुरुपादोदकं पिबेत् ॥

'अज्ञान की जड़ को उखाड़नेवाले, अनेक जन्मों के कर्मों को निवारनेवाले, ज्ञान और वैराग्य को सिद्ध करनेवाले श्री गुरुदेव के चरणामृत का पान करना चाहिए ।' (श्रीगुरुगीता)

देह में अहंता-ममता अज्ञान का मूल है । जगत में सत्यबुद्धि करना अज्ञान का मूल है । वृत्तियों की सत्यता मानना अज्ञान का मूल है । सुख और दुःख में सत्यबुद्धि करना अज्ञान का मूल है । जीवन और मौत में सत्यबुद्धि करना अज्ञान का मूल है । पद और प्रतिष्ठा में रस आना अज्ञान का मूल है । जगत् की कोई भी परिस्थिति में सुख से बँध जाना यह अज्ञान की ही महिमा है ।

जन्म से जन्मान्तर तक भटकानेवाले जो कर्म हैं, बाहर सुख दिखानेवाले जो कर्म हैं, बाहर सत्यता दिखानेवाली जो बुद्धि है उस बुद्धि को बदलकर ऋतंभरा प्रज्ञा पैदा कर दे, रागवाली बुद्धि को हटाकर आत्मरतिवाली बुद्धि पैदा कर दे, सरकते हुए संसार से चित्त हटाकर शाश्वत् परमात्मा के तरफ ले चले ऐसे कोई सद्गुरु मिल जायें तो वे अज्ञान को हरण करके, जन्म-मरण के बन्धनों को काटकर तुम्हें स्वरूप में स्थापित कर देते हैं ।

अज्ञान का मूल क्या है ? अज्ञान का मूल वासना है । जैसे नाविक नाव को ले जाता है और नाव नाविक को ले जाती है ऐसे ही अज्ञान से वासना पैदा होती है और वासना से अज्ञान बढ़ता है । नश्वर में प्रीति बढ़ती रहती है यह अज्ञान का लक्षण है । ज्ञान की केवल बातों से काम न चलेगा, यंत्रवत् माला घुमाने से काम न चलेगा, सेठों को राजी रखने से काम न चलेगा । तुम चाहे कितने ही मंत्र करते रहो लेकिन बेवकूफी कम हुई या बढ़ी उस पर निगाह रखनी पड़ेगी । अज्ञान घटता है कि नहीं यह देखना पड़ेगा । यदि तुम अज्ञान में ही मंत्र करते जाओगे तो मंत्र का फल तुम्हारी वासनापूर्ति होगा और वासनापूर्ति हुई तो तुम भोग भोगोगे । भोग से भोग की इच्छा नयी हो जायगी ।

तप करने से क्या फर्क पड़ता है ? जप करने से क्या फर्क पड़ता है ? फर्क तो तब पड़ता है जब कोई सद्गुरु मिल जाय । फर्क तो तब पड़ता है जब

सद्गुरु की सीख दिल में उतर जाय... जन्म-मरण के चक्र में डालनेवाले जो कर्म हैं उन कर्मों का निवारण करनेवाला कोई सद्गुरु मिल जाय... सत्य की झलकें देनेवाला, सत्य के गीत सुनानेवाला सद्गुरु मिल जाय... जिनके सान्निध्य से तुम्हारे जीवन में ज्ञान और वैराग्य निखर आये, जिसके उपदेश से तुम्हारी बुद्धि की मलिनता दूर होकर विवेक वैराग्य जग जाय !

काश ! वे दिन कितने सौभाग्यशाली रहे होंगे कि जब भर्तृहरि पूरा राज्य छोड़कर चले गये । गोरखनाथ के चरणों में जा पड़े । गोरखनाथ के चरणों में गिरते समय राजा भर्तृहरि को संकोच नहीं हुआ, लज्जा नहीं आयी, कोई पद और प्रतिष्ठा याद नहीं आये । वे समझते थे : **'अज्ञानमूलहरणं जन्मकर्मनिवारकं...'** जन्म-जन्मान्तर के जो कर्म हैं उनका निवारण करने का सामर्थ्य यदि किसीमें है तो सद्गुरु की करुणाकृपा में है । जन्म-जन्मान्तर की बेवकूफी को दूर करने की यदि कुँजियाँ हैं तो संतों के द्वार पर हैं ।

ईश्वर के मार्ग पर कदम रखनेवाले वे ही लोग पहुँचते हैं जो दृढ़ निश्चयी होते हैं । परमात्मा के मार्ग पर वे ही वीर चल पाते हैं जिनके अन्दर अथाह उत्साह, महान सहनशक्ति, विचित्र विचारबल होता है ।

रहुगण राजा राज्य से उपराम होकर शान्ति पाने के लिए जा रहा है । होगी बुद्धि कुछ पवित्र । कई राजा तो मरते दम तक आसक्ति नहीं छोड़ते । रहुगण ऐसा हतभागी नहीं था । वह भीतर की शान्ति खोजने जा रहा है पालकी में बैठकर । पालकी उठानेवालों में से रास्ते में एक आदमी बीमार पड़ा तो जड़भरतजी उसकी जगह पर पालकी ढोने में लगा दिये गये । सब में अपने आप को निहारनेवाले जड़भरतजी चींटी-चींटा आदि देखते तब उनको बचाने के लिए थोड़ा-सा कूद पड़ते । राजा का सिर पालकी में टकराता । इससे राजा उनको डाँटता-फटकारता ।

सद्गुरु अज्ञान को हरण कर के, जन्म-मरण के बन्धनों को काटकर तुम्हें स्वरूप में स्थापित कर देते हैं ।

ब्रह्मनिष्ठ जड़भरतजी को उस अज्ञानी राजा पर करुणा उपजी । बुद्ध पुरुष करुणा के भंडार होते हैं । सच्ची करुणा और सच्ची उदारता, सच्ची समझ और सच्चा ज्ञान तो जड़भरतजी जैसों के पास ही हुआ करता है । मूर्खों की नजर में वे जड़ जैसे लगते हैं लेकिन वास्तव में वे ही चैतन्य पुरुष होते हैं । संसारियों ने उनका नाम जड़ रख दिया था, लेकिन वे ऐसे जड़ थे कि हजारों जड़ लोगों की जड़ता का नाश करने की कुँजियाँ उनके पास थीं । क्या दुर्भाग्य रहा होगा लोगों का कि ऐसे भरतजी का सान्निध्य-लाभ न पा सके । उन व्यास मुनि को हृदयपूर्वक नमस्कार हो कि उन्होंने जड़भरतजी के जीवन पर थोड़ा-सा प्रकाश डाल दिया । वह प्रकाश आज भी काम आ रहा है ।

अज्ञान के मूल को हरनेवाले, जन्मों के कर्मों को हटानेवाले जड़भरत राजा रहुगण को कहते हैं :

"हे राजन् ! जब तक तू आत्मज्ञानियों के चरणों में अपने अहं को न्योछावर न करेगा, जब तक ज्ञानवानों की चरणरज में स्नान करके सौभाग्यशाली न बनेगा तब तक तेरे दुःख न मिटेंगे, तेरा शोक न मिटेगा ।

दुःख को हरते सुख को भरते करते ज्ञान की बात जी ।
जग की सेवा लाला नारायण करते दिन रात जी ॥

सच्ची सेवा तो सच्चे संत पुरुष ही करते हैं । सच्चे माता-पिता तो वे संत, महात्मा, गुरु लोग ही होते हैं । हाड़-मांस के माता-पिता तो तुमको कई बार मिले हैं । तुमने लाखों-लाखों बाप बदले होंगे, लाखों-लाखों माँएँ बदली होंगी, लाखों-लाखों कण्ठी बाँधनेवाले गुरु बदले होंगे, लेकिन जब कोई सद्गुरु मिलते हैं तो तुम्हें ही बदल देते हैं ।

अज्ञान के मूल को हटानेवाले, जन्म-मरण के कारणों को और पातकों को भस्मीभूत करनेवाले, ज्ञान और वैराग्य के अमृत को तुम्हारे दिल में भरनेवाले सत्पुरुषों का सत्संग और सान्निध्य मिल जाय तो कितना अहोभाग्य ! ऐसे पुरुषों की डाँट भी मिल जाय तो कितनी सुहावनी होगी ! वे डण्डा लेकर पिटाई करने लग जायें तो कितने मधुर होंगे वे डण्डे ! वे तमाचा मार दें तो भी उसमें कितनी करुणा होगी !

मेरे गुरुदेव ने एकबार मुझे ऐसी जोरों की डाँट लगायी कि सुननेवाले भयभीत हो गये । मैंने अपने-आपको धन्यवाद दिया कि जिन हाथों से हजार-हजार मीठे फल मिले हैं उन्हीं हाथों से यह खटमीठा फल कितना सुंदर है ! कितनी उदारता के साथ वे डाँटते हैं ! उस दिन की बात याद आती है तो भाव से तन-मन रोमांचित हो जाते हैं । उस डाँट में कितनी करुणा छुपी थी ! कितना अपनत्व छुपा था !

गोरखनाथ के चरणों में गिरते समय राजा भर्तृहरि को संकोच नहीं हुआ, लज्जा नहीं आयी, कोई पद और प्रतिष्ठा याद नहीं आये । वे समझते थे : जन्म-जन्मान्तर के जो कर्म हैं उनका निवारण करने का सामर्थ्य यदि किसीमें है तो सद्गुरु की करुणाकृपा में है ।

किसी संन्यासी ने मुझे कहा था : ''ऐ युवक ! तू मेरे पास से रिद्धि-सिद्धियाँ सीख ले । मैं तुझे अनुष्ठान बताता हूँ । इससे तुझे जो चाहिए वे चीजें मिलने लगेगी ।'' इस प्रकार के प्रलोभन देकर वह अपना कुछ कचरा मुझे दे रहा था । गुरुदेव को पता चला । मुझे बुलवाया । चरणों में बिठाया और पूछा :

''क्या बात सुन रहा था ?''

मैंने जो कुछ सुना था वह श्रीचरणों में सुना दिया । सद्गुरु के आगे यदि ईमानदारी से दिल खोलकर बात न करोगे तो हृदय मलिन होगा । भीतर ही भीतर बोझा बढ़ाना पड़ेगा, जाओगे कहाँ ? मैंने पूरा दिल खोलकर सद्गुरु के कदमों में रख दिया । संन्यासी के साथ जो बातचीत हुई थी वह ज्यों की त्यों दुहरा दी । फिर मैं क्षण भर मौन हो गया, जाँचा कि कोई शब्द रह तो नहीं गया । गुरु के साथ विश्वासघात करने का पाप तो नहीं लग रहा ? गुरु से बात छुपाने का दुर्भाग्य तो नहीं मिल रहा ? मैंने ठीक से जाँचा । जो कुछ स्मरण आया वह सब कह दिया ।

ईमानदारी से सारी की सारी बात कह देने के बाद भी ऐसी जोरों की डाँट पड़ी कि मेरा हार्टफेल न हुआ, बाकी उत्साह, श्रद्धा, विश्वास, प्रेम और सच्चाई सब फेल हो रहा था । सद्गुरु ने ऐसी डाँट लगाने के बाद स्नेहपूर्ण स्वर से कहा :

''बेटा ! देख ।''

आहा ! डाँट भी इतनी तेज और 'बेटा' कहने में प्यार भी इतना पूर्ण ! क्योंकि पूर्ण पुरुष जो भी करते हैं वह पूर्ण ही होता है ।

श्रद्धा, विश्वास, प्रेम आदि सब फेल होने का पूरा मौका था लेकिन जिन्होंने माया की जंजीरों को फेल कर दिया है, जिन्होंने अज्ञान को फेल कर दिया है उनके चरणों में यदि अपना अहंकार फेल हो जाय तो घाटा भी क्या है ? अपनी अक्कल और चतुराई उनके चरणों में फेल हो जाय तो घाटा क्या पड़ा ? मेरी सारी बुद्धिमत्ता, सारी व्यापारी विद्या, सारी साधना की अकड़ फेल हो गई । सिर नीचे हो गया, आँखें झुक गईं । उन्होंने कहा :

''हे राजन् ! जब तक तू आत्मज्ञानियों के चरणों में अपने अहं को न्योछावर न करेगा, जब तक ज्ञानवानों की चरणरज में स्नान करके सौभाग्यशाली न बनेगा तब तक तेरे दुःख न मिटेंगे, तेरा शोक न मिटेगा ।

''बेटा ! सुन । साधक-जिज्ञासु बाज पक्षी है । जैसे बाज पक्षी आकाश को उड़ान लेता है और शिकारी

तीर चढ़ाकर ताकता रहता है उसे गिराने के लिए । ऐसे ही साधक ईश्वर के तरफ चलता है तो भेदवादी लोग, अज्ञांनी लोग ताकते रहते हैं तुम्हें गिराने के लिये । परिस्थितियाँ ताकती रहती हैं फिर से तुम्हें संसार में खींचने के लिये । कानों में ऐसी बातें भर देते हैं कि साधक का पतन हो जाय । अज्ञानियों की बातों को महत्त्व न दो ।

बेटा ! मैं तुझे डाँटता हूँ लेकिन भीतर तेरे लिये प्रेम के सिवा और कुछ नहीं । मैंने तेरेको कंपित कर दिया लेकिन तेरे लिये करुणा के सिवा और कुछ नहीं ।''

सच्ची सेवा तो सच्चे संत-पुरुष ही करते हैं । सच्चे माता-पिता तो वे संत, महात्मा, गुरु लोग ही होते हैं ।

जन्मों की धारणा और मान्यताओं को तोड़नेवाले, अज्ञान के मूल स्वरूप इच्छाओं को हटानेवाले, बेवकूफी को छीननेवाले, ज्ञान और वैराग्य को हृदय में भरनेवाले, विवेक और शान्ति की छाया में रखनेवाले उन गुरुजनों के चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम !

इस जीव की हालत तो ऐसी है जैसे बाढ़ में बहता हुआ कोई कीड़ा एक भँवर से दूसरे भँवर में भटकता जा रहा है । दयालु पुरुष की नजर पड़े और उसको उठाकर वृक्ष की छाया में रख दे । इसी प्रकर ब्रह्मवेत्ताओं का काम होता है । सदियों से भटकते हुए जीव संसार की सरिता में बहे जा रहे हैं, उनको वे प्रेम का प्रसाद देकर, पुचकार का सहारा देकर, साधना का इशारा देकर उन्हें संसार-सरिता के किनारे लगा देते हैं । जन्म-मरण के भँवर से बाहर निकालने के लिये सहारा दे देते हैं । ये कृपासिन्धु गुरु लोग इस पृथ्वी पर न होते तो लोग संसार में बिना आग जलते । यदि वे महापुरुष इस वसुन्धरा पर न होते तो लोग बिना पानी के डूबे रहते चिन्ता में । यदि वे दयालु ज्ञानीजन न होते तो मानव मानव का भक्षण किये बिना न रहता । यदि ज्ञानवानों की अनुकम्पा बार-बार इस पृथ्वी पर न बरसती तो मनुष्य पशु से ज्यादा भयंकर कृत्य करता ।

मेरे गुरुदेव ने एकबार मुझे ऐसी जोरों की डाँट लगायी कि सुननेवाले भयभीत हो गये । मैंने अपने-आपको धन्यवाद दिया कि जिन हाथों से हजार-हजार मीठे फल मिले हैं उन्हीं हाथों से यह खटमीठा फल कितना सुंदर है ! उस दिन की बात याद आती है तो भाव से तन-मन रोमांचित हो जाते हैं । उस डाँट में कितनी करुणा छुपी थी !

ये सब उन्हीं सत्पुरुषों की देन है कि आज हजारों-हजारों दिल प्रभु के प्रेम में पिघल सकते हैं । हजारों दिल पाप-ताप का निवारण करके परमात्मा के प्यार में बह सकते हैं । प्यारे के दीदार में वे बिक सकते हैं । उनकी मुलाकात में वे बिखर सकते हैं । चाहे वे ज्ञानवान समाज में प्रसिद्ध हुए हों चाहे अप्रसिद्ध रहे हों, लोगों के बीच रहे हों चाहे न रहे हों, लेकिन उन सद्गुरुओं की बड़ी भारी कृपा है जो सत् में विचरण करते-कराते हैं, और सदा-सदा कराते ही रहेंगे । उन सत्पुरुषों की तो कृपा है हम लोगों पर । वे ही लोग हम पर अनुकम्पा करते हैं । बाकी के लोग तो भगवान के नाम पर दुकानदारी चलाते हैं, मत-पंथ-संप्रदाय बनाते हैं । सत्पुरुष ही ऐसे होते हैं, सच्चे संत-महात्मा ही ऐसे होते हैं जो वास्तव में भगवान के नाम का रस पिला सकते हैं । वे वास्तविक में अज्ञान को हटाकर आत्मज्ञान का प्रकाश दे सकते हैं । बाकी तो पंथ-संप्रदाय कब्रस्तान हो जाते हैं । जीवन जीवन नहीं रहता । जीवन मौत के तरफ सरकता जाता है । ज्ञानवान् पुरुषों की कृपा होती है तब जीवन जीवनदाता के रास्ते पर चलना शुरू करता है ।

जिन्होंने ज्ञानवान् पुरुषों की बात का सेवन किया है, जिन्होंने ज्ञानी के कदमों में अपने अहंकार को बिखेर दिया है, जिन्होंने ज्ञानी की बातों में अपने अहं को, मान्यताओं को कुर्बान कर

दिया है उनको इहलोक और परलोक में दुःख नहीं रहता । वे सचमुच धनभागी हैं । धनवान धनी नहीं है, सत्तावान धनी नहीं है, इच्छावान धनी नहीं है, जो संत और परमात्मा का प्यारा होता है वही सच्चा धनी है ।

कबीरा सब जग निर्धना धनवन्ता नहीं कोई ।
धनवन्ता ता को जानिये जाको रामनाम धन होई ॥

मौत के समय तुम्हारे रूपये-पैसे क्या रक्षा करेंगे ? मौत के समय तुम्हारे बेटे और बहुएँ क्या रक्षा करेगी भैया ? मौत के समय तुम्हारे बड़े महल क्या साथ चलेंगे ? मौत के समय भी सद्गुरु की दी हुई प्रसादी तुम्हारा साथ करेगी, मौत के समय भी गुरु का ज्ञान तुम्हारे दिल में भरेगा तो तुम मौत की भी मौत करके मोक्ष के तरफ चल पड़ोगे । ये संस्कार व्यर्थ नहीं जाते । सत्संग के ये वचन मौके पर काम कर जाते हैं । दिया जलता है, औरों के लिये प्रकाश कर जाता है । नदियाँ बहती हैं, औरों के लिये पानी दे जाती हैं । मेघ बरसता है, औरों के लिये । इसी प्रकार महापुरुष दुनिया में बरस जाते हैं चार दिनों के लिये, उनकी याद रह जाती है, उनके गीत रह जाते हैं, उनका ज्ञान रह जाता है । उनका शरीर तो चला जाता है लेकिन उनकी स्मृति नहीं जाती, उनके लिये आदर-प्रेम नहीं जाता । उनके लिये श्रद्धा के फूल बरसते ही रहते हैं ।

सद्गुरु के आगे यदि ईमानदारी से दिल खोलकर बात न करो तो हृदय मलिन होगा । भीतर ही भीतर बोझा बढ़ाना पड़ेगा, जाओगे कहाँ ?

वे आँखें धन्य हैं जो उनकी याद में बरस पड़े । वे होठ धन्य हैं जो उनकी याद में कुछ गुन-गुनाये । वह जिह्वा धन्य है जो उनकी याद में कुछ कह पाये । वह शरीर धन्य है जो उनकी याद में रोमांचित हो पाये । वे निगाहें धन्य हैं जो उनकी स्मृतियों के तरफ निहार पायें ।

जिन्होंने माया की जंजीरों को फेल कर दिया है, जिन्होंने अज्ञान को फेल कर दिया है उनके चरणों में यदि अपना अहंकार फेल हो जाय तो घाटा भी क्या है ?

ऐसे पुरुषों को हम क्या दे सकते हैं जिनको सारी पृथ्वी का ऐश्वर्य तुच्छ लगा है, जिनकी सारी इच्छाएँ और कामनाएँ नष्ट हो गई है ? उन महापुरुषों को हम क्या दे सकते हैं ? हमारे पास उनको देने के लिये है ही क्या ? शरीर रोगी और मरनेवाला, मन कपटी, चीजें बिखरनेवाली । हम दे भी क्या सकते हैं ? हमारे तो उनके कदमों में हजार-हजार प्रणाम हों ! लाखों-लाखों प्रणाम हों ! करोड़ों-करोड़ों प्रणाम हों ! जिन्होंने हमारे पीछे अपना सर्वस्व लुटा दिया, जिन्होंने हमारे पीछे अपने एकान्त को न्योछावर कर दिया, उन पुरुषों को हम दे भी क्या सकते हैं ?

हम व्यावहारिक बुद्धि के आदमी ! हम स्वार्थी पुतले ! हम इन्द्रियों के गुलाम ! हम विषय-लम्पटता की जाल में घूमनेवाले मकड़े ! हम उनको क्या दे सकते हैं ?

हम उनको प्रार्थना कर सकते हैं... हम उनको आँखों के पुष्प दे सकते हैं... दो आँसू दे सकते हैं : लो गुरुदेव ! ले लो... ये आँसू ले लो... हमारी पुकार सुन लो... हमें चुप कराने की जिम्मेदारी भी तुम ही सँभालो ! हे सद्गुरु...

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।

पूत कपूत हो सकता है लेकिन माता कब कुमाता हुई ? पिता कब कुपिता हुए ? जब बेवफाई की तो बेटे ने की है, माँ ने कब की है ?

वे प्यारे शूली को सेज बनाकर गये, वे प्यारे जहर को अमृत बनाकर गये, वे प्यारे विरोध को गहने बनाकर गये, वे प्यारे अपमान को सिंगार बनाकर गये, केवल, जिज्ञासुओं के इन्तजार में कि कोई साधक मिल जाय, हमें लूटनेवाला कोई शिष्य मिल जाय । वे बेवकूफों के आगे भी अपने-आपको लुटाते रहे, कहीं समझदार भी लूटने आ जाय । हजारों-

हजारों के आगे बोलते रहे, कहीं एक प्यारा मिल जाय, कहीं एक जिज्ञासु मिल जाय, हमें झेलनेवाला कहीं एक मुमुक्षु मिल जाय । इसी आशा-आशा में हजारों पर बरसते रहे, लाखों-लाखों पर बरसते रहे । कितने धैर्यवान होंगे, कितने धीर पुरुष रहे होंगे वे सत्पुरुष !

हमारे सद्गुरु हों या और किसीके सद्गुरु हों, वे तो सारे विश्व के सद्गुरु हैं । लोग उन्हें नहीं जानते तो लोग अन्धे हैं । लोग उन्हें नहीं मानते तो लोग पागल हैं। वे महापुरुष तो सारे ब्रह्माण्ड के होते हैं । ऐसे सद्गुरुओं के कदमों में अवतारों के भी सिर झुक जाते हैं, तुम्हारे हमारे झुक जायें तो क्या बड़ी बात है ? ॐ... ॐ... ॐ...

संसारी लोगों को देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है कि नाहक वे अपने दिन व्यतीत कर रहे हैं, जिसका नाश हो जायगा उसके पीछे जीवन दे रहे हैं और जिसका कभी नाश नहीं होगा ऐसे शाश्वत आत्मदेव से मिलने के लिये उनके पास समय नहीं है । कितने अभागे हैं !

गुरु दीवो गुरु देवता...

गुरु एक दिया है । दिया जल जाता है औरों के लिये, गुरु भी जीवन को खपा देते हैं औरों के लिये ।

गुरु दीवो गुरु देवता गुरु विण घोर अन्धार ।
जे गुरु वाणी वेगळा रड़वड़िया संसार ॥

जो गुरु की वाणी से दूर हैं वे खाक धनवान हैं ? जो गुरु के वचनों से दूर हैं वे खाक सत्तावान हैं ? जो गुरु की सेवा से विमुख हैं वे खाक देवता हैं ? वे तो भोगों के गुलाम हैं । जो गुरु के वचनों से दूर हैं वे क्या खाक अमृत पीते हैं ? उनको तो पद-पद पर राग-द्वेष का जहर पीना पड़ता है ।

जैसे बाज पक्षी आकाश को उड़ान लेता है और शिकारी तीर चढ़ाकर ताकता रहता है उसे गिराने के लिए । ऐसे ही साधक ईश्वर के तरफ चलता है तो भेदवादी लोग, अज्ञानी लोग ताकते रहते हैं तुम्हें गिराने के लिये ।

'जे गुरुवाणी वेगळा रड़वड़िया संसार...'

अज्ञान के मूल को हरण करनेवाले, जन्म-कर्म को निवारनेवाले, सदियों के पापों को भस्म करनेवाले, अनन्त पकड़ों और मान्यताओं को तोड़कर परमात्मा से जोड़नेवाले सद्गुरुओं के लिये वेदव्यासजी कहते हैं :

अज्ञानमूलहरणं जन्मकर्मनिवारकम् ।
ज्ञानवैराग्य सिद्ध्यर्थं गुरुपादोदकं पिबेत् ॥

गुरु के चरणों का जल, चरणामृत पियें । उनके आदेशानुसार अपने जीवन को ढालें । उनकी चाह में अपनी चाह मिला दें । उनकी निष्ठा में अपनी निष्ठा मिला दें । उनकी मस्ती में अपनी हस्ती मिटा दें, कल्याण हो जायगा ।

तू क्या हस्ती रखता है भैया ? जिनका बड़ा राजवैभव लहलहा रहा था वे महाराजा भर्तृहरि गोरखनाथ के चरणों में जा पड़े :

''हे नाथ !''

गुरु के कदमों में भारत का सम्राट आज अश्रुपात करके, सिर में खाक डालते हुए, रूखे-सूखे टुकड़े चबाकर भी रहना पसंद करता है, जबकि आज का कहलानेवाला बुद्धिमान, अहंकारी 'रोक एन्ड रोल' में नाचना पसंद करता है, क्लबों में जाना पसंद करता है, सिनेमा में धक्के खाना पसंद करता है लेकिन गुरुओं का द्वार उसे भाता नहीं ।

ऐ समझदारों के वेश में नासमझ नादानों ! दुनियाँ की चीजें तुम्हें क्या सुख देगी ? सिनेमा की पट्टियाँ तुम्हारा बल और बुद्धि, तुम्हारा तेज और ओज नष्ट कर देगी । यदि जीवन में बल और बुद्धि, तेज और ओज बढ़ाना है तो ऋषि कहते हैं :

गुरुदेव की कृपा का जल तुम पीते रहो । उसीसे नहाते रहो । उसीकी समझ में तुम डूबे रहो । उनके

सत्संग में ही तुम खोये रहो । उन्हीं के गीतों में तुम मशगूल रहो ।

जगत में तुम सदा से खोते आये हो, सदियों से तुम नश्वर चीजों के लिए मिटते आये हो । अब उस परमात्मा के लिए अपने अहं को मिटाकर देखो । यदि मिट भी गये और कुछ नहीं मिला, ठगे भी गये तो घाटा ही क्या है ? वैसे भी तुम ठगाते आये हो । कोई पत्नी से ठगा गया, कोई पति से ठगा गया, कोई बहू से ठगा गया, कोई बेटे से ठगा गया, कोई सत्ता से ठगा गया, कोई चोरों से ठगा गया । आखिर में तो सब मौत से ठगे ही जानेवाले हैं ।

ब्रह्मवेत्ताओं का काम होता है... सदियों से भटकते हुए जीव संसार की सरिता में बहे जा रहे हैं, उनको वे प्रेम का प्रसाद देकर, पुचकार का सहारा देकर, साधना का इशारा देकर उन्हें संसार-सरिता के किनारे लगा देते हैं ।

मौत ठग ले उसके पहले तू गुरु से ठगा जा तो घाटा भी क्या पड़ेगा ? अब ठगवाने को तुम्हारे पास बचा भी क्या है ? युगों से तुम ठगाते आये हो, युगों से तुम हारते आये हो । एक बार और हार सही । एक बार ओर दाँव सही ।

चाहे तैरा दो चाहे डूबा दो ।
मर भी गये ता देंगे दुआएँ ॥

'अज्ञानमूल हरणं...'

ऋषि का सन्देश कितना सुन्दर रहा होगा ! कितनी उदार और करुणापूर्ण वाणी प्रकट हुई होगी ! यह श्लोक किसी पामर व्यक्ति का बनाया हुआ नहीं है । ये किसी अहंकारी के वचन नहीं हैं । ये तो हैं किसी पूरे अनुभवी के वचन । पूरा सत्‌शिष्य ही सद्‌गुरु का अमृत पी सकता है । यह शेरनी का दूध सुवर्ण पात्र में ही रह सकता है । छोटे-मोटे पात्र को तो वह चीरकर चला जाता है । ये गुरु के वचन अभागे को शोभा नहीं देते ।

सत्पुरुषों की देन है कि आज हजारों हजारों दिल प्रभु के प्रेम में पिघल सकते हैं । हजारों दिल पाप-ताप का निवारण करके परमात्मा के प्यार में बह सकते हैं ।

योगवाशिष्ठ महारामायण में महर्षि वशिष्ठ कहते हैं :

''हे रामजी ! जैसे खीर सुवर्ण के पात्र में शोभा पाती है और श्वान की खाल में पवित्र खीर भी अपवित्र हो जाती है ऐसे ही मतलबी और स्वार्थी शिष्यों के आगे ब्रह्मज्ञान शोभा नहीं पाता लेकिन अहंकार रहित सत्पात्र शिष्यों के हृदय में ये गुरु के वचन शोभा देते हैं, पवित्र शिष्यों के दिल में ये वचन उगते हैं । उगे हुए वचनों को जब सींचा जाता है तब उनमें मोक्षरूपी फल लगता है । उससे वह स्वयं भी तृप्त होता है और दूसरों को भी तृप्ति देता है ।''

गुरु के उपदेश का जो सेवन करते हैं, गुरु के कृपाकटाक्ष को जो दिल की प्यालियों से पीते हैं उनको यहाँ भी दुःख स्पर्श नहीं करता और वहाँ भी स्पर्श नहीं करता । वे यहाँ भी सुख की घड़ियाँ जी लेते हैं । उन सौभाग्यशाली शिष्यों को दुःख में से सुख बनाना आता है, सुख में से सुविधा बनाना आता है और सुविधा से सत्य के दीदार पाना आता है । ऐसे सत्‌शिष्य बोलते हैं कि एक बार कदम रख ही लिया तो फिर क्या रुकना ? ईश्वर के रास्ते चल दिया तो मुड़कर क्या आना ?

तूफान और आँधी हमको न रोक पाये ।
वे और थे मुसाफिर जो पथ से लौट आये ॥

जो सत्‌शिष्य है, जो सद्‌गुरु के कदमों में बिखर गया है, जिसने अपनी दिल की प्याली सीधी रखी है और सद्‌गुरु के अमृत को पी लिया है वह साधना के मार्ग से, भगवान के मार्ग से लौटकर नहीं आता । संसारी तूफानों से वह डरता नहीं । ऐसा कौन-सा साधक सिद्ध बना है जिसने तूफान और आँधी का मुकाबला न किया हो ? ऐसे कौन-से महापुरुष

हैं जिन्हें कुचलने के लिये लोगों ने प्रयास न किये हों ? ऐसे कौन-से संत पुरुष हैं जिन्होंने लोगों की बातों को कुचलकर, पैरों तले दबाकर, परमात्म-प्राप्ति की यात्रा न कर दिखायी हो ?

वे ही पहुँचे हैं जो रुके नहीं। अनुकूलता में फँसे नहीं और प्रतिकूलता से डरे नहीं, वे ही तो पहुँचे हैं। सुविधा के भगत तो रह गये, थोड़ी-सी उलझन में उलझ गये लेकिन सत्पात्र साधक तो मंजिल तय करके ही रहता है।

और कोई मुसाफिर होते हैं तो पथ से लौटते रहते हैं लेकिन सद्गुरु के रास्ते चला और पथ से लौटा तो सत्शिष्य किस बात का ? अगर लौट भी गया तो जो हजारों यज्ञ करने से भी मिलना कठिन है वह स्वर्ग और ब्रह्मलोक का सुख उसे अनायास मिलता है।

लोग तो भगवान के नाम पर दुकानदारी चलाते हैं, मत-पंथ-संप्रदाय बनाते हैं। सत्पुरुष ही ऐसे होते हैं, सच्चे संत-महात्मा ही ऐसे होते हैं जो वास्तव में भगवान के नाम का रस पिला सकते हैं। वे वास्तव में अज्ञान को हटाकर आत्मज्ञान का प्रकाश दे सकते हैं।

शुक्र अपने ब्रह्मवेत्ता पिता भृगु ऋषि की सेवा में रहकर साधना कर रहे थे। सेवा से निवृत्त होते तो योगाभ्यास में लग जाते, ध्यान करते। साधना करते-करते उनकी वृत्ति सूक्ष्म हुई तो सूक्ष्म जगत में गति होने लगी। अभी परमपद पाया न था। न अज्ञानी थे न ज्ञानी थे। बीच में झूले खा रहे थे। एक दिन आकाश मार्ग से जाती हुई विश्वाची नामक अप्सरा देखी तो मोहित हो गये। अन्तवाहक शरीर से उसके पीछे स्वर्ग में गये।

इन्द्र ने उन्हें देखा तो सिंहासन छोड़कर सामने आये। स्वागत किया और अपने आसन पर बिठाकर पूजा करने लगे।

मौत के समय तुम्हारे रूपये पैसे क्या रक्षा करेंगे ? मौत के समय तुम्हारे बेटे और बहुएँ क्या रक्षा करेगी भैया ? मौत के समय तुम्हारे बड़े महल क्या साथ चलेंगे ? मौत के समय भी गुरु का ज्ञान तुम्हारे दिल में भरेगा तो तुम मौत की भी मौत करके मोक्ष के तरफ चल पड़ोगे। ये संस्कार व्यर्थ नहीं जाते। सत्संग के ये वचन मौके पर काम कर जाते हैं।

''आज हमारा स्वर्ग पवित्र हुआ कि महर्षि भृ[illegible] के पुत्र और सेवक तुम स्वर्ग में आये हो।''

हालाँकि वे गये तो थे विश्वाची अप्सरा के मो[illegible] में, फिर भी उनकी की हुई साधना व्यर्थ न[illegible] गई। इन्द्र भी अर्घ्यपाद्य से उनकी पूजा करते हैं[illegible] ब्रह्मज्ञान की इतनी महिमा [illegible] कि ब्रह्मज्ञानी का योगभ्र[illegible] सेवक भी सुरपति से पूजा ज[illegible] रहा है।

आप लोग तीन-चार दि[illegible] की ध्यानयोग शिविरों में ज[illegible] आध्यात्मिक धन कमा लेते ह[illegible] इतना मूल्यवान खजाना आप[illegible] पूरे जीवन में नहीं कमाय[illegible] होगा। इससे हमारे पूर्वजों क[illegible] भी कल्याण होता है। तुम्हार[illegible] बुद्धि स्वीकार करे या न करे तुम्हें अभी वह पुण्य-संचय दिखे या न दिखे लेकिन बात सौ प्रतिशत सत्य है[illegible]

साधक यदि सब चिन्ताओं से मुक्त होकर परमात्म[illegible] के ज्ञान में लग जाय तो वह स्वयं अनपढ़ होते हु[illegible] भी लोगों को ज्ञान दे सकता है[illegible] निर्धन होते हुए भी धनवानों को दान दे सकता है, अनजान होते हुए भी जानकारों को नयी जानकारी दे सकता है। उसके पास सारे ज्ञान का खजाना प्रकट होने लगता है। बिना पढ़े हुए शास्त्रों के रहस्य उसके हृदय में प्रकट होने लगते हैं। बिना देखी हुई चीजें उसके द्वारा प्रकाशित होने लगती हैं। विभिन्न विद्या-शाखाएँ और विज्ञान की जानकारियाँ उसके आगे छोटी रह जाती हैं। जब गुरुभक्त के हृदय का द्वार खुल जाता है तो उसके आगे सारा जहां छोटा हो[illegible]

जाता है । स्वर्ग और फरिश्ते भी छोटे हो जाते हैं ।

शादी के बाद छः महिने में ही एक महिला का पति चल बसा । महिला पागल-सी हो गई । भाग्यवशात् उसे सच्चे संत का सत्संग मिल गया । सत्संग में जाने लगी और संत-गुरु-परमात्मा के आदेशानुसार घर में साधन-भजन करने लगी ।

उसने गुरुकृपा पाकर ध्यानयोग में प्रगति की । सूक्ष्म जगत के परदे हटने लगे । रहस्य-मय लोक में उसकी वृत्ति गति करने लगी । ध्यान में कई देवी-देवताओं के दर्शन होने लगे । एक बार इन्द्रदेव विमान लेकर प्रकट हुए और स्वर्ग में चलने के लिए आमन्त्रण दिया । गुरुदेव ने महिला से कह रखा था कि किसी प्रलोभन में मत फँसना । उसने गुरुजी का स्मरण करते हुए इन्द्र को इन्कार कर दिया ।

इन्द्र ने कहा : "गुरु की बात गुरु के पास रही । तुझे मौका मिला है तो स्वर्ग की सैर करके तो देख !"

दस-पन्द्रह मिनट वार्तालाप चला होगा । वह महिला गुरु की आज्ञा में दृढ़ रही ।

ये सारे देव-देवियाँ हैं । उनको देखने के लिये तुम्हारे पास आँख चाहिये । जैसे, वातावरण में रेडियो और टी.वी. के 'वेव्ज़' हैं फिर भी तुम्हें वे दिखते नहीं, सुनाई नहीं पड़ते क्योंकि तुम्हारे पास उसको प्रकट करने का साधन नहीं है । इसी प्रकार देवी और देवता, किन्नर और गन्धर्व ये सब हैं । उनके साथ तुम्हारा संवाद हो सकता है ऐसे तुम भी हो । लेकिन इसके लिए एक सूक्ष्म, भावप्रधान, एकाग्रवृत्ति चाहिये, कुछ ऊँची यात्रा चाहिये । वह यात्रा अगर हो जाय तो तुम यक्ष-गन्धर्व-किन्नर और देवी-देवता के दर्शन कर सकते हो, उनसे वार्तालाप कर सकते हो, उनसे सहायता ले सकते हो, भविष्य की जानकारी पा सकते हो ।

लेकिन सद्गुरु का सत्-शिष्य इन चीजों में उलझता नहीं, इनकी इच्छा भी नहीं करता । उसका रास्ता तो और निराला होता है ।

अहमदाबाद से दिल्ली जाने के लिये लोकल ट्रेन में बैठो तो छोटे-मोटे कई स्टेशनों के दर्शन होंगे । बिना स्टेशन के भी गाड़ी कहीं-कहीं रुक जायगी क्योंकि लोकल जो है ! कई जंगल, नदी, नाले के दृश्य देखने को मिलेंगे । मेल से जायें तो छोटे-छोटे स्टेशन न देख पाओगे । गाड़ी धड़ाधड़ आगे बढ़ती जायगी । अगर तुम हवाई-जहाज में बैठो तो बीच के रास्ते के स्टेशनों का अस्तित्व ही तुम्हारे लिये नहीं है ।

चौथा रास्ता है नादानों का, जिन्होंने यात्रा की ही नहीं । वे लोग चिल्लायेंगे कि : 'पालनपुर नहीं है, मेहसाना नहीं है, आबूरोड़ नहीं है, अजमेर-जयपुर नहीं है, दिल्ली भी नहीं है । अगर होते तो मुझे दिखते ।'

अरे नादान । न तू लोकल में लटका, न मेल में बैठा, न हवाई-जहाज की यात्रा की । तू तो देह में और नश्वर भोगों में उलझा है । मोह माया में फँसा है । तुझे बोलने का हक नहीं । व्यर्थ प्रलाप करके पाप बढ़ा लेता है ।

इस पृथ्वी पर कई नास्तिक

> *जिनको सारी पृथ्वी का ऐश्वर्य तुच्छ लगा है, जिनकी सारी इच्छाएँ और कामनाएँ नष्ट हो गई हैं । उन महापुरुषों को हम क्या दे सकते हैं ? हमारे पास उनकों देने के लिये है ही क्या ? शरीर रोगी और मरनेवाला, मन कपटी, चीजें बिखरने वाली । हमारे तो उनके कदमों में हजार-हजार, लाखों-लाखों, करोड़ों करोड़ों प्रणाम हों ! जिन्होंने हमारे पीछे अपना सर्वस्व लुटा दिया, जिन्होंने हमारे पीछे अपने एकान्त को न्योछावर कर दिया, उन पुरुषों को हम दे भी क्या सकते हैं ?*

> *धनवान धनी नहीं है, सत्तावान धनी नहीं है, इच्छावान धनी नहीं है, जो संत और परमात्मा का प्यारा होता है वही सच्चा धनी है ।*

हुए, कई फकीर हुए, कई संत-महापुरुष हुए । फकीरों ने तो संशय की फाकी कर दी लेकिन नास्तिकों ने साधना की ही फाकी कर दी । न ध्यान के गाँव में गये, न कीर्तन के गाँव में गये, न सत्पुरुषों के चरणों में मिट पाये और अपना 'जजमैन्ट' देते गये कि कुछ नहीं है... कुछ नहीं है... कुछ नहीं है ।

ऐसे लोगों को महापुरुष आवाहन देते हैं, अनुभवनिष्ठ संतपुरुष नास्तिकों को फटकारते हैं : ''तुम बोलते हो 'कुछ नहीं है। 'कुछ नहीं है' यह कहनेवाला कौन है यह तो बताओ ! 'नहीं' बोलता है तो किसकी सत्ता से, किसकी शक्ति से बोलता है रे ? 'कुछ नहीं है' का प्रमाण तेरे पास क्या है ?''

''मुझे दिखता नहीं इसलिये कहता हूँ कि कुछ नहीं है । मैं अपनी आँखों से देखूँ तब मानूँ ।''

तात्त्विक अनुभव आँखों से देखे नहीं जाते, कानों से सुने नहीं जाते, नाक से सूँघे नहीं जाते, जिह्वा से चखे नहीं जाते । फिर भी हैं ।

नास्तिक कहता हैं :

'जब लग न देखूं मोरे नैन
तब लग न मानूँ तोरे बैन ।'

फकीर कहते हैं : ''ऐसे ही तेरे को वह तत्त्व बता दूँ ? मेरे प्रभु को देखने के लिये तेरे पास नम्रता नहीं है, सरलता नहीं है, समय नहीं है तो मेरे पास भी ईश्वरीय मस्ती छोड़कर तेरे जैसे भूत के पीछे लगने का समय नहीं है । बार-बार जन्मो और मरो, संसार की भँवरों में भटको ।''

ऐसा मानव-जन्म, ऐसी देह, ऐसी बुद्धि.. और इसे पत्थर परखने के लिये गँवा रहे हो ?

वशिष्ठजी कहते हैं : 'हे रामचन्द्रजी ! संसारी लोगों को देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है कि नाहक वे अपने दिन व्यतीत कर रहे हैं, अपना समय गँवा रहे हैं, नश्वर चीजों के पीछे, नश्वर भोगों के पीछे । जिसका नाश हो जायगा उसके पीछे जीवन दे रहे हैं और जिसका कभी नाश नहीं होगा ऐसे शाश्वत आत्मदेव से मिलने के लिये उनके पास समय नहीं है । कितने अभागे हैं ! हे रामजी ! ऐसे लोगों को धिक्कार है । लौकिक विद्याएँ तो वे जानते हैं लेकिन आत्मविद्या से वे वंचित् हैं । गन्धर्व लोग गीत-नृत्य तो जानते हैं लेकिन आत्म-मस्ती में नाचने से वंचित् हैं । उन देवताओं को भी धिक्कार है कि वे स्वर्ग का अमृत पीकर अपना पुण्य नष्ट कर रहे हैं । संतों का अमृत पीकर अपने पापों का नाश करते तो क्या घाटा था ?'

पाँच ही तो इन्द्रियाँ हैं तुम्हारे पास । इससे पाँच विषय ही जान पाते हो : शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध । इसके अलावा जानने की तुम्हारे पास छठी इन्द्रिय होती तो जगत् के छठे विषय का भी ज्ञान हो जाता । नाक खराब है तो तुम्हारे लिए सुगन्ध नहीं है । जन्म से आँख नहीं है तो रूप गायब हो गया । श्रोत्र खराब है तो शब्द गायब है । उनके लिये जगत भी चार हिस्से का, तीन हिस्से का रह जाता है । तुम्हारे लिये जगत् पाँच हिस्से का है । योगी जब छठी इन्द्रिय जाग्रत कर लेते हैं तो उनके लिये जगत् छः हिस्से में । इससे भी आगे चलकर कोई अपनी

वे प्यारे शूली को सेज बनाकर गये, वे प्यारे जहर को अमृत बनाकर गये, वे प्यारे विरोध को गहने बनाकर गये, वे प्यारे अपमान को सिंगार बनाकर गये, केवल, जिज्ञासुओं के इन्तजार में कि कोई साधक मिल जाय, हमें लूटनेवाला कोई शिष्य मिल जाय । हजारों-हजारों के आगे बोलते रहे, कहीं एक प्यारा मिल जाय, कहीं एक जिज्ञासु मिल जाय, हमें झेलनेवाला कहीं एक मुमुक्षु मिल जाय ।

पूरा सत्शिष्य ही सद्गुरु का अमृत पी सकता है । छोटे-मोटे पात्र को तो वह चीरकर चला जाता है । ये गुरु के वचन अभागे को शोभा नहीं देते ।

के पास गये । घूमते घामते जगन्नाथ पुरी में पहुँचे । जगन्नाथजी के दर्शन किये । वहाँ किसी मठ में गये तो महंत ने आँख उठाकर देखा तक नहीं । बड़े बड़े सेठों से ही बात करते रहे ।

दूसरे दिन अखा भगत किराये पर कोट, पगड़ी, मोजड़ी, छड़ी आदि धारण करके शरीर को सजाकर महंत के पास गये और प्रणाम करके जेब से सुवर्ण-मुद्रा निकाल कर रख दी । महंत ने चेले को आवाज लगायी । चेले ने आज्ञानुसार मेवा-मिठाई, फलादि लाकर रख दिये ।

अखा नये कपड़े लाये थे किराये पर, उन कोट, पगड़ी आदि को कहने लगे : 'खा... खा... खा... ।' छड़ी को लड्डू में ठूँसकर बोल रहे हैं : 'ले...खा...खा...।' मठाधीश कहने लगा : ''सेठजी यह क्या कर रहे हो ?''

''महाराजजी ! मैं ठीक कर रहा हूँ । जिसको तुमने दिया उसको खिला रहा हूँ ।''

''तुम पागल तो नहीं हुए हो ?''

''पागल तो मैं हुआ हूँ लेकिन परमात्मा के लिये, रूपयों के लिये नहीं, मठ-मंदिरों के लिये नहीं । मैं पागल हुआ हूँ तो अपने प्यारे के लिये हुआ हूँ ।''

साधना-काल में हम भी घूमते-घामते, भटकते-टकराते हुए कई बार घर लौट आये, फिर गये । जब लीलाशाह बापू मिल गये तब बिक गये उनके चरणों में । ऐसे पुरुष होते हैं अज्ञान को हरण करनेवाले । अन्य लोग तो अज्ञान को बढ़ानेवाले होते हैं । अखा भगत कह रहे हैं :

साची शीतलता अखा सद्गुरु केरे संग ।
और गुरु संसार के पोषत हैं भवरंग ॥

ऐसा कौन-सा साधक सिद्ध बना है जिसने तूफान और आँधी का मुकाबला न किया हो ? ऐसे कौन-से महापुरुष हैं जिन्हें कुचलने के लिये लोगों ने प्रयास न किये हों ? ऐसे कौन-से संत पुरुष हैं जिन्होंने लोगों की बातों को कुचलकर पैर तले दबाकर परमात्म-प्राप्ति की यात्रा न कर दिखायी हो ?

आप लोग तीन चार दिन की ध्यानयोग शिविरों में जो आध्यात्मिक धन कमा लेते हो इतना मूल्यवान खजाना आपने पूरे जीवन में नहीं कमाया होगा । इससे हमारे पूर्वजों का भी कल्याण होता है ।

और लोग हैं वे संसार का रंग देते हैं, सांसारिक रंग में हमें गहरा डालते हैं । वैसे ही हम अन्ध हैं और वे हमें कूप में डालते हैं । 'इतना करो तो तुम्हें यह मिलेगा... वह मिलेगा । तुम्हारा यश होगा, कुल की प्रतिष्ठा होगी... स्वर्ग मिलेगा ।' पहले से ही हमारा मन चंचल बन्दर, फिर शराब पिला दी, ऊपर से काटे बिच्छू, फिर कहना ही क्या ? अर्जुन गीता में कहते हैं :

चंचलं हि मनः कृष्ण
प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये
वायोरिव सुदुष्करम् ॥

'हे श्रीकृष्ण ! यह मन बड़ा चञ्चल, प्रमथन स्वभाववाला, बड़ा दृढ़ और बलवान है । उसको वश में करना मैं वायु को रोकने की भाँति अत्यन्त दुष्कर मानता हूँ ।' (गीता : ६.३४)

तुम्हारा मन चंचल है । वायु को रोकना सरल भी हो सकता है मगर मन को रोकना कठिन है । ऐसे वासना संयुक्त मन को फिर संसार के रंगवाले गुरु मिल जायें, जिनके पास भीतर का रंग न हो, तो वे कहेंगे : 'इस प्रकार का टिला किया करो.. इस धर्म, संप्रदाय में माना करो... यह तुम्हारी जाति है ।' वे लोग ऐसा नहीं कहेंगे कि तुम्हारा मजहब, जाति, संप्रदाय सब कल्पना है । वे तो कहेंगे कि तुम जाति, धर्म, संप्रदाय के वाड़े में फँसे रहो, वाड़े से बाहर न निकलो । क्योंकि अगर बाहर निकल जाओगे तो हमारी पूजा कैसे होगी ? हमारी आमदनी कैसे होगी ? या तो इस भाव से कहते हैं या फिर वे खुद वाड़े से बाहर कभी गये नहीं इसलिए वह बात वे लोग जानते ही नहीं कि वे तुम्हें बतायें । जो लोग तुम्हें

है उससे कई गुना फल तो संत के दर्शन से होता है । ऐसे कोई संत मिल जायें !

जड़भरत राजा रहुगण को कह रहे हैं : ''हे राजन् ! तुमको शांति तब मिलेगी जब ज्ञानवानों की चरणरज में स्नान करोगे ।'' गोरखनाथ कह रहे हैं राजा भर्तृहरि को, अष्टावक्र कह रहे हैं राजा जनक को, वशिष्ठजी कह रहे हैं श्रीराम को । ऋषि कह रहे हैं हम लोगों को ।

नहीं मैं नहीं तू नहीं अन्य रहा,
गुरु शाश्वत आप अनन्य रहा ।
गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ,
तिनको नहीं दुःख यहाँ न वहाँ ॥

जिन्होंने गुरुओं से ज्ञान की कुँजी पा ली वे समझते हैं कि संसार सारा स्वप्न है । वे संसार के दुःख को भी देखते रहते हैं और सुख को भी देखते रहते हैं, स्वर्ग और नर्क को भी देखते रहते हैं । वे दृष्टा, साक्षी होकर आत्मा में मस्त रहते हैं फिर 'मैं' और 'तू' की कल्पना वहाँ जोर नहीं मारती । अहंता और ममता वहाँ परेशानी पैदा नहीं करती । वे निर्मल पद में जीते हैं । बाजार से गुजरते हैं लेकिन खरीददार नहीं होते । सुख-दुःख के बाजार से निकल तो जाते हैं लेकिन वे कोई निराली मस्ती में होते हैं । ज्ञानी भी तुम्हें बाजार में मिल सकता है, युद्ध में मिल सकता है, राज्य में मिल सकता है, लेकिन वह बाजार में है नहीं, युद्ध में है नहीं, राज्य में है नहीं । ज्ञानी तुम्हें घर में मिल सकता है लेकिन वह घर में है नहीं । तुम्हारी सभा के बीच मिल सकता है लेकिन वह केवल सभा में ही नहीं, अनन्त अनन्त ब्रह्माण्डों में फैला हुआ चैतन्य है ।

ज्ञानी की चेतना का बयान, ज्ञानी की गरिमा का बयान तो वेद भी नहीं कर सकते । 'नेति... नेति... नेति... ।' पृथ्वी, जल, तेज इन तीन भूतों जितनी व्यापकता ? नहीं । वायु और आकाश जितनी व्यापकता ? नहीं, उससे भी परे । उससे भी परे जो चैतन्य होता है वही तो ज्ञानी का अपना आपा होता है ।

'हे रामजी ! जब ज्ञानवान होता है तब सुख से जीता है, सुख से लेता है, सुख से देता है, सुख से खाता है, सुख से पीता है । सब चेष्टा करता हुआ दिख पड़ता है लेकिन हृदय से कुछ नहीं करता । जब वह शरीर का त्याग कर देता है तो ब्रह्मा होकर सृष्टि करता है, विष्णु होकर पालन करता है, रुद्र होकर संहार करता है, सूर्य होकर तपाता है और चाँद होकर औषधि पुष्ट करता है । ऐसा ज्ञानी का वपु होता है । सच पूछो तो अज्ञानी का भी वही वपु है लेकिन अज्ञानी अपने को देह मानकर सुख-दुःख के पीछे भटकता है । ज्ञानी अपने को स्वरूप में डूबा हुआ रखकर कर्म करते हुए भी सुख-दुःख से निराला रहता है । अखा भगत कहते हैं :

साची शीतलता अखा
सद्गुरु केरे संग ।

सच्ची जो शीतलता है सच्ची जो शान्ति है, वह सद्गुरुओं के संग में है । अखा भगत मस्त आत्मज्ञानी संत हो गये । वे भी निकले थे सत्य को पाने के लिये । मार्ग में आँधी और तूफान बहुत आये फिर भी वे कहीं रुके नहीं । सुना है कि वे कई मठ-मन्दिरों में गये, महंत-मंडलेश्वरों

सद्गुरु के रास्ते चला और पथ से लौटा तो सत्शिष्य किस बात का ? अगर लौट भी गया तो जो हजारों यज्ञ करने से भी मिलना कठिन है वह स्वर्ग और ब्रह्मलोक का सुख उसे अनायास मिलता है ।

गुरु के उपदेश का जो सेवन करते हैं, गुरु के कृपाकटाक्ष को जो दिल की प्यालियों से पीते हैं उनको यहाँ भी दुःख स्पर्श नहीं करता और वहाँ भी स्पर्श नहीं करता । उन सौभाग्यशाली शिष्यों को दुःख में से सुख बनाना आता है, सुख में से सुविधा बनाना आता है और सुविधा से सत्य के दीदार पाना आता है ।

है उससे कई गुना फल तो संत के दर्शन से होता है । ऐसे कोई संत मिल जायें !

जड़भरत राजा रहुगण को कह रहे हैं : ''हे राजन् ! तुमको शांति तब मिलेगी जब ज्ञानवानों की चरणरज में स्नान करोगे ।'' गोरखनाथ कह रहे हैं राजा भर्त्तृहरि को, अष्टावक्र कह रहे हैं राजा जनक को, वशिष्ठजी कह रहे हैं श्रीराम को । ऋषि कह रहे हैं हम लोगों को ।

नहीं मैं नहीं तू नहीं अन्य रहा,
गुरु शाश्वत आप अनन्य रहा ।
गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ,
तिनको नहीं दुःख यहाँ न वहाँ ॥

जिन्होंने गुरुओं से ज्ञान की कुँजी पा ली वे समझते हैं कि संसार सारा स्वप्न है । वे संसार के दुःख को भी देखते रहते हैं और सुख को भी देखते रहते हैं, स्वर्ग और नर्क को भी देखते रहते हैं । वे दृष्टा, साक्षी होकर आत्मा में मस्त रहते हैं फिर 'मैं' और 'तू' की कल्पना वहाँ जोर नहीं मारती । अहंता और ममता वहाँ परेशानी पैदा नहीं करती । वे निर्मल पद में जीते हैं । बाजार से गुजरते हैं लेकिन खरीददार नहीं होते । सुख-दुःख के बाजार से निकल तो जाते हैं लेकिन वे कोई निराली मस्ती में होते हैं । ज्ञानी भी तुम्हें बाजार में मिल सकता है, युद्ध में मिल सकता है, राज्य में मिल सकता है, लेकिन वह बाजार में है नहीं, युद्ध में है नहीं, राज्य में है नहीं । ज्ञानी तुम्हें घर में मिल सकता है लेकिन वह घर में है नहीं । तुम्हारी सभा के बीच मिल सकता है लेकिन वह केवल सभा में ही नहीं, अनन्त अनन्त ब्रह्माण्डों में फैला हुआ चैतन्य है ।

ज्ञानी की चेतना का बयान, ज्ञानी की गरिमा का बयान तो वेद भी नहीं कर सकते । 'नेति... नेति... नेति... ।' पृथ्वी, जल, तेज इन तीन भूतों जितनी व्यापकता ? नहीं । वायु और आकाश जितनी व्यापकता ? नहीं, उससे भी परे । उससे भी परे जो चैतन्य होता है वही तो ज्ञानी का अपना आपा होता है ।

'हे रामजी ! जब ज्ञानवान होता है तब सुख से जीता है, सुख से लेता है, सुख से देता है, सुख से खाता है, सुख से पीता है । सब चेष्टा करता हुआ दिख पड़ता है लेकिन हृदय से कुछ नहीं करता । जब वह शरीर का त्याग कर देता है तो ब्रह्मा होकर सृष्टि करता है, विष्णु होकर पालन करता है, रुद्र होकर संहार करता है, सूर्य होकर तपाता है और चाँद होकर औषधि पुष्ट करता है । ऐसा ज्ञानी का वपु होता है । सच पूछो तो अज्ञानी का भी वही वपु है लेकिन अज्ञानी अपने को देह मानकर सुख-दुःख के पीछे भटकता है । ज्ञानी अपने को स्वरूप में डूबा हुआ रखकर कर्म करते हुए भी सुख-दुःख से निराला रहता है । अखा भगत कहते हैं :

साची शीतलता अखा
सद्गुरु केरे संग ।

सच्ची जो शीतलता है सच्ची जो शान्ति है, वह सद्गुरुओं के संग में है । अखा भगत मस्त आत्मज्ञानी संत हो गये । वे भी निकले थे सत्य को पाने के लिये । मार्ग में आँधी और तूफान बहुत आये फिर भी वे कहीं रुके नहीं । सुना है कि वे कई मठ-मन्दिरों में गये, महंत-मंडलेश्वरों

सद्गुरु के रास्ते चला और पथ से लौटा तो सत्‌शिष्य किस बात का ? अगर लौट भी गया तो जो हजारों यज्ञ करने से भी मिलना कठिन है वह स्वर्ग और ब्रह्मलोक का सुख उसे अनायास मिलता है ।

गुरु के उपदेश का जो सेवन करते हैं, गुरु के कृपाकटाक्ष को जो दिल की प्यालियों से पीते हैं उनको यहाँ भी दुःख स्पर्श नहीं करता और वहाँ भी स्पर्श नहीं करता । उन सौभाग्यशाली शिष्यों को दुःख में से सुख बनाना आता है, सुख में से सुविधा बनाना आता है और सुविधा से सत्य के दीदार पाना आता है ।

की नहीं हजारों लोगों की प्रार्थनाएँ फलती हैं । यह परमात्मा की ही कृपा है ।

लोग प्रदक्षिणा करने लग गये ।

प्रेम में बड़ी ताकत होती है । प्रेम ही तो राज्य करता है । सचमुच में डंडा कोई राज्य थोड़े ही करता है ! बंदूकों का शासन कोई थोड़े ही चलता हैं । बंदूकों का शासन तो दिखावटी शासन है ।

एक कप्तान कहीं जाता, उसके अधीनस्थ लोग सलाम देते तो उसके मुँह से निकल जाता : ''ऐसे ही तो करते हो ।'' यह उसका हमेशा का जवाब था । उसके साथी ने एक बार कह दिया कि :

''साहब ! आपको कोई सलाम करता है तो आपके मुँह से स्वाभाविक निकल आता है 'ऐसे ही तो करते हो ।' क्या बात है ?''

कप्तान ने कहा : ''मुझे धीरे-धीरे नीचे की नौकरियों से प्रमोशन होते हुए कप्तान की जगह मिली है । मुझे पता है कि जब हमारे अफसर लोग आते हैं तो अंदर से तो उनके लिए बड़ी घृणा होती है । बाहर से सलाम करनी पड़ती है । हम लोग ऐसे ही करते थे । अब मुझे पता है कि यह लोग भी हममें से ही तो हैं । हमारे वालों में से तो हैं ।''

राजा का राज्य नहीं चलता । राज्य तो सदा महाराजाओं का ही चलता है । राजा तो ऐसे ही अहंकार भर लेता है कि मेरा राज्य है । भले ही लोग गालियाँ देते हों ।

संत के लिए ऐसा नहीं होता । बायजीद बैठे हैं । लोग प्रदक्षिणा कर रहे हैं । बायजीद उनकी ओर निहारते हैं । एक मुस्कान से ही उनका तन और मन पवित्र कर दिया । ज्ञानी में सामर्थ्य होता है । निगाहों से निहाल करने का सामर्थ्य है तो बुद्ध पुरुषों में है । पंडित में नहीं, विद्वान में नहीं । विद्वान ठीक है, धार्मिक है बेचारा । बुद्ध पुरुष बेचारे नहीं होते ।

यात्रियों ने बायजीद की प्रदक्षिणा की । बायजीद ने देखा कि दर्शन से कुछ निहाल हुए हैं, कुछ प्रदक्षिणा से पावन हुए हैं ।

उन्होंने कहा : 'भाई ! जेरूसलेम में क्या करोगे ?''लोगों ने कहा : ''पत्थर को चूमेंगे, खुदा की जो प्रतिमा है उसे चूमेंगे ।''

बायजीद अपना हाथ देते हुए बोले : ''उसको चूमोगे इससे तो इसको जरा चूम लो ।''

लोगों ने हाथ चूम लिया । कृतकृत्य हो गये । निहारते निहारते खड़े रह गये ।

बायजीद ने कहा : ''अब जाओ घर । आगे जाने की अब जरूरत नहीं । तुम्हारी यात्रा यहीं सफल हो गई ।''

कर्म तेरे अच्छे हैं तो किस्मत तेरी दासी ।
दिल अगर साफ है तो घर में मक्का-काशी ॥
घर मां छे काशी ने घर मां मथुरा,
घर मां छे गोकुलियुं गाम रे ।
मारे नथी जावुं तीरथ धाम रे ॥

घर का मतलब तुम्हारा चार दीवारों वाला घर नहीं बल्कि हृदयरूपी घर । उसमें यदि तुम जा सकते हो तो फिर तीर्थों में जाओ, कोई हरकत नहीं । मगर तीर्थों में तुम्हें पुण्य न होगा । तीर्थों को पुण्य होगा, तीर्थ तीर्थत्व को उपलब्ध हो जायेंगे ।

यदि तुम भीतर जा सके, पहुँच गये, किसी बुद्ध पुरुष की चिनगारी लग गई तुम्हारे दिल में, तो फिर तीर्थों से तुम्हें पुण्य न होगा । तुमसे तीर्थों को पवित्रता मिलेगी ।

बायजीद कहते हैं : ''प्रदक्षिणा हो गई, यात्रा पूरी हो गई, अब जाओ ।''

लोगों को जाने की इच्छा नहीं होती थी ।

ज्ञानी पुरुष ऐसे जादुगर होते हैं कि निहारते निहारते जादू लगा देते हैं ।

बायजीद कहते हैं : ''अब घर चले जाओ । तीर्थयात्रा पूरी हो गई । मगर एक बात सुनना, अगले साल फिर उधर जाने की जरूरत नहीं और इधर आने की भी जरूरत नहीं । तुम जहाँ हो वहीं पर गोता मारना ।''

कितना स्वतंत्र कर देते हैं फकीर !

साची शीतलता अखा सतगुरु केरे संग ।
और गुरु संसार के पोषत है भवरंग ॥

और गुरु बोलेंगे तुम अमुक पंथ के हो, शैव हो, शाक्त हो ब्राह्मण हो, वैश्य हो...

सद्गुरु कहेंगे कि तुम ब्राह्मण, वैश्य, हिन्दू, मुस्लिम

(शेष पृष्ठ ३९ पर)

ईश्वर के साकार दर्शन करने के बाद भी मोह हो सकता है, काम, क्रोध, लोभ, कपट, बेईमानी रह सकती है । जैसे कि कैकेयी, मंथरा, शूर्पणखा, दुर्योधन, शकुनि आदि ने ईश्वर के दर्शन किये थे, ईसाईवालों ने ईसा के दर्शन किये थे फिर भी उनमें दुर्गुण मौजूद थे, क्योंकि भगवान का आत्मरूप से दर्शन करानेवाले सद्गुरु से स्वरूप का साक्षात्कार नहीं किया था ।

शरीर की आँखों से भले ही कितना भी दर्शन करो, लेकिन जब तक ज्ञान की आँख नहीं खुलती तब तक आदमी जन्म मरण के थपेड़े खाता ही रहता है । दर्शन तो अर्जुन ने भी किये थे श्रीकृष्ण के, परंतु जब श्रीकृष्ण ने उपदेश देकर कृष्ण-तत्त्व का दर्शन कराया तब अर्जुन कहता है :

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा
त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः
करिष्ये वचनं तव ॥

'हे अच्युत ! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है और स्मृति प्राप्त हो गई है । मैं सन्देहरहित होकर स्थित हूँ । अब मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा ।' (गीता:१८.७३)

शिवजी का, रामजी का या श्रीकृष्ण का दर्शन हो जाये मगर जब तक सद्गुरु आत्मा-परमात्मा का दर्शन नहीं कराते तब तक अविद्या बनी ही रहती है । सद्गुरु के तत्त्वज्ञान को पाये बिना इस जीव की साधना अधूरी ही रह जाती है । मन जगत् की ओर लगा रहता है । कभी खुश तो कभी नाराज, कभी मन में मजा आया तो कभी नहीं आया इसलिये कबीरजी ने कहा है :

भटक मूँआ भेदु बिना, पावे कौन उपाय ।
खोजत-खोजत जुग गये, पाँव कोस घर आय ॥

मृत्यु आकर शरीर छीन ले तथा जीव अनाथ होकर मर जाय उसके पहले अपने नाथ से मिलना चाहिये, परंतु मन बाहर की, संसार की वासनाओं में भटका देता है । कोई भाग्यशाली होते हैं दान-पुण्य, सेवा, साधना, जप,तप आदि करके उत्तम समझ पाते हैं ।

जीवन में आत्मशांति प्राप्त करने की जिनको रुचि व तत्परता है वे इस पृथ्वी के देव हैं ।

जीवन में आत्मशांति प्राप्त करने की जिनको रुचि व तत्परता है वे इस पृथ्वी के देव हैं ।

देव तीन प्रकार के हैं : (१) आजानुदेव वे हैं जो सृष्टि के आदि में उत्पन्न हुए और कल्प तक देवलोक में ही रहेंगे ।

(२) दूसरे हैं कर्मज देव जो तप, यज्ञ, व्रत आदि कर्म करके देवत्व पाते हैं । उनका पुण्य क्षीण होते ही उनको मृत्युलोक में भेज दिया जाता है ।

(३) तीसरे देव वे होते हैं जो धरती के देव कहलाते हैं । ये सत्कर्म, दान, पुण्य करते हैं, कथा-वार्ता सुनते हैं, भगवान की ओर चलते हैं, औरों को भी चलाने में साझीदार होते हैं लेकिन बदले में ऐहिक वाहवाही तथा पारलौकिक स्वर्गादि नहीं चाहते। वे केवल परमात्मदेव को चाहते हैं । वे सत्संग के कार्यों में लगे रहते हैं । चाहे हजार-हजार विघ्न-बाधाएँ आ जायें, श्रद्धा तोड़नेवाले प्रसंग आ जायें फिर भी ये दृढ़ता से लगे ही रहते हैं । इनको धरती के देव कहा जाता है ।

कबीरजी के पास ईश्वर का संदेश आया कि आप वैकुंठ में पधारें । कबीरजी की आँखों में आँसू आ गये । इसलिये नहीं आये कि हाय ! अब जाना पड़ता है या मरना पड़ता है... बल्कि इसलिये आँसू आये कि वहाँ सत्संग नहीं है । कबीरजी लिखते हैं :

राम परवाना भेजिया,
वाँचत कबीरा रोय ।
क्या करूँ तेरी वैकुंठ को,
जहाँ साध-संगत नहीं होय ॥

ऐसी ऊँची समझवाले जो होते हैं वे अगर सत्संग में जाते हैं और जैसे-जैसे समझ बढ़ती जाती है, तैसे ही तैसे वे सत्य-स्वरूप आत्मा-परमात्मा की ओर चल पड़ते हैं और आखिर में परमात्मपद को, परम शांति को पाते हैं, जिसके आगे इन्द्र का पद और अन्य वैभव भी कुछ नहीं ।

सद्गुरु के तत्त्वज्ञान को पाये बिना इस जीव की साधना अधूरी ही रह जाती है । मन जगत् की ओर लगा रहता है । कभी खुश तो कभी नाराज...

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं,
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥

'जैसे सम्पूर्ण नदियों का जल चारों ओर से, जल द्वारा परिपूर्ण समुद्र में आकर मिलता है, पर समुद्र अपनी मर्यादा में अचल प्रतिष्ठित रहता है ऐसे ही सम्पूर्ण भोग-पदार्थ जिस संयमी मनुष्य में विकार उत्पन्न किये बिना ही उसको प्राप्त होते हैं, वही मनुष्य परम शांति को प्राप्त होता है... भोगों की कामनावाला नहीं ।'

(गीता : २ : ७०)

जैसे समुद्र में सारी नदियाँ चली जाती हैं, फिर भी समुद्र अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता, सबको समा लेता है, ऐसे ही उस निर्वासनिक पुरुष के पास सब कुछ आ जाय फिर भी वह परम शांति में निमग्न पुरुष ज्यों का त्यों रहता है । ऐसी अवस्था का ध्यान कर अगर साधन-भजन किया जाय तो मनुष्य शीघ्र ही अपनी उस मंजिल पर पहुँच जाता है ।

निम्नलिखित तीन बातें सब लोगों को अपने जीवन में लानी ही चाहिये । ये तीन बातें जो नहीं जानता वह मनुष्य के वेष में पशु ही है ऐसा सत्पुरुषों का मत है ।

पहली बात यह है कि मृत्यु कभी भी, कहीं भी हो सकती है, यह बात पक्की मानो । इसको कभी न भूलो । दूसरी बात यह है कि बीता हुआ समय पुनः लौटता नहीं । इसलिये सत्य-स्वरूप परमात्मा को पाने के लिये समय का सदुपयोग करो ।तीसरी बात यह है कि अपना लक्ष्य-परम शांति परमात्मा ही होना चाहिये ।

पहली बात यह है कि मृत्यु कभी भी, कहीं भी हो सकती है, यह बात पक्की मानो । इसको कभी न भूलो ।

दूसरी बात यह है कि बीता हुआ समय पुनः लौटता नहीं । इसलिये सत्य-स्वरूप परमात्मा को पाने के लिये समय का सदुपयोग करो ।

तीसरी बात यह है कि अपना लक्ष्य-परम शांति परमात्मा ही होना चाहिये ।

अगर आपका लक्ष्य निश्चित नहीं है और घर से निकल पड़े तो महीनों तक भटकते रहो, यात्रा करते रहो फिर भी कहीं नहीं पहुँच पाओगे । तुम उलझ जाओगे । यदि आप यहाँ आने का लक्ष्य बनाकर नहीं आते तो क्या सत्संग में पहुँच पाते ? अतः पहले लक्ष्य बनाना पड़ता है फिर यात्रा शुरु होती है । ऐसे ही हम भगवत्प्राप्ति का उच्च लक्ष्य बनाकर नहीं चलते हैं इसलिये हम वर्षों तक भटकते हुए भी अंत में कंगले के कंगले ही रह जाते हैं ।

आप पूछेंगे : ''महाराज ! कंगले क्यों ? भक्ति की तो धन मिला, यश मिला ।''

भैया ! यह तो मिला, लेकिन मरोगे तब यहाँ का यश, धन यहीं पड़ा रह जाएगा । कुछ साथ नहीं आयेगा । तुम कंगले ही रह जाओगे । सच्चा धन तो आत्मधन है । सच्चा धन तो परमात्मा की प्राप्ति है । कबीरजी ने ठीक ही कहा है :

कबीरा यह जग निर्धना,
धनवंता नहीं कोई ।
धनवंता तेहुँ जानिये,
जाको रामनाम धन होई ॥

जिसके जीवन में रोम-रोम में रमनेवाला, परम सुख-शांति देनेवाला, आनंद-स्वरूप चैतन्य राम का

धन नहीं है वह धनवान होते हुए भी कंगाल ही तो है ।

मनुष्य में विकास की इतनी सारी सम्भावनाएँ हैं कि वह भगवान का भी माता-पिता बन सकता है । दशरथ-कौशल्या ने भगवान श्रीराम को जन्म दिया था और देवकी-वसुदेव भगवान श्रीकृष्ण के माता-पिता बने थे । मनुष्य में अनंत संभावनाएँ हैं लेकिन यदि सद्गुरु के चरणों में वह नहीं जाता और सूक्ष्म साधना में रुचि नहीं रखता तो मनुष्य जन्म-मरण के चक्कर में भटकता ही रहता है ।

जिसके जीवन में रोम-रोम में रमनेवाला, परम सुख-शांति देनेवाला, आनंद-स्वरूप चैतन्य राम का धन नहीं है वह धनवान होते हुए भी कंगाल ही तो है ।

आज भोगी भोग में भटक रहा है, त्यागी त्याग में भटक रहा है और भक्त बेचारा भावनाओं में भटक रहा है । हालांकि भोगी से और अहंकारी त्यागी से तो भक्त अच्छा है, लेकिन वह भी भटक रहा है । इसलिये नानकजी ने कहा :

संत जना मिल हर जस गाइये ।

उच्च कोटि के महापुरुषों के चरणों में बैठकर हरि के गुण गाओ, उनसे मार्गदर्शन लेकर चलो । कबीरजी कहते है :

सहजो कारज संसार को
गुरु बिना होत नाहीं ।
हरि तो गुरु बिन क्या मिले,
समझ ले मन मांहीं ॥

संसार का छोटे से छोटा कार्य भी सीखने के लिये कोई न कोई गुरु तो चाहिये और फिर बात अगर जीवात्मा को परमात्मा के साक्षात्कार कराने की आती है तो उसमें ब्रह्मवेत्ता आत्मसाक्षात्कारी सद्गुरु की आवश्यकता क्यों न होगी भैया ?

मनुष्य में विकास की इतनी सारी सम्भावनाएँ हैं कि वह भगवान का भी माता-पिता बन सकता है । दशरथ-कौशल्या ने भगवान श्रीराम को जन्म दिया था और देवकी-वसुदेव भगवान श्रीकृष्ण के माता-पिता बने थे ।

मेरे आश्रम में एक महंत रहता है । मुझे एक बार सत्संग के लिये कहीं जाना पड़ा । मैंने उस महंत से कहा : ''आटा आदि सामान यहाँ पड़ा है । रोटी तुम अपने हाथों से बना लेना ।''

उसने कहा : ''ठीक है ।''

वह पहले एक सेठ था । बाद में संत बन गया तो मैंने उसे महंताई दी थी ।

तीन दिन के बाद जब मैं लौटा तब महंत से पूछा :

''कैसा रहा ? भोजन बनाया था कि नहीं ?''

''आटा खतम हो गया और रोटी एक भी नहीं खाई ।''

''क्यों ? क्या हुआ ?''

महंत बोला : ''आटा थाल में लिया और पानी डाला तो रबड़ा हो गया । फिर सोचा थोड़ा-थोड़ा पानी डालकर बनाऊँ तो बने नहीं । फिर सोचा वैसे भी रोटी बनाते हैं तो आटा सिकता ही है, तो क्यों न तपेली में डालकर जरा हलवा बना लें । वैसा बनाने गया तो आटे में गांठें ही गांठें हो गई तो गाय को दे दिया । दूसरे दिन सोचा चलो मालपूआ जैसा कुछ बनावें लेकिन स्वामीजी ! कुछ जमा ही नहीं । आटा सब खत्म हो गया और रोटी का एक ग्रास भी नहीं खा पाया ।''

जब आटा गूँथने और सब्जी बनाने के लिये भी किसी न किसी से सीखना पड़ता है, गुरु बनाना पड़ता है तो जीवात्मा को भी यदि परमात्मा का साक्षात्कार करनेवाला बनना है तो अवश्य ही सद्गुरु से सीखना ही पड़ेगा ।

गुरु बिन भवनिधि
तरहिं न कोई ।
चाहे बिरंचि
शंकर सम होई ॥

गुरु की कृपा के बिना तो कुछ भी नहीं पाया जा सकता । ऐसे महापुरुषों को पाने के लिये भगवान से मन ही मन

अशांति पैदा करता है, इसकी अपेक्षा भगवान के श्रीविग्रह को देखकर उसीको भीतर प्रवेश कराओ । भगवान के प्यारे संतों के वचन सुनकर उन्हें व्यवहार में लाओ तो काँटे से काँटा निकलता है, ऐसे ही सत्संग से कुसंग निकलता है । सुदर्शन से कुदर्शन का आकर्षण निवृत्त होता है । यदि कुदर्शन हट गया तो सुदर्शन तुम्हारा स्वभाव हो जाएगा । भगवान के दर्शन से मोह हो सकता है लेकिन भगवान के सत्संग से मोह दूर होता है । दर्शन से भी सत्संग ऊँचा हो गया । सत्संग मनुष्य को सत्य-स्वरूप परमात्मा में प्रतिष्ठित कर शांत-स्वरूप परमात्मा का अनुभव कराता है ।

अन्तर्आराम अन्तर्सुख अन्तर्ज्योतिरेव च ।

सत्संग से आंतरिक सुख, आंतरिक आराम मिलता है । सत्संग आंतरिक ज्ञान की ज्योति जगाता है । दीपक की ज्योति गर्म होती है, जो वस्तुओं को जलाती है लेकिन भीतर के ज्ञान की ज्योति जब सद्गुरु प्रज्वलित कर देते हैं, तो वह वस्तुओं को नहीं, पापों को जलाकर जीवन में प्रकाश लाती है, शांति और माधुर्य ले आती है ।

जिनके हृदय में वह अचल शांति प्रगट हुई है उनकी आँखों में जगमगाता आनन्द, संतप्त हृदयों को शांति देने का सामर्थ्य, अज्ञान में उलझे हुए जीवों को आत्मज्ञान देने की उनकी शैली, अपने-आप में अद्वितीय होती है ।

ऐसे पुरुष संसार में जीते हुए लाखों लोगों के अंत:करण भगवदाकार बना देते हैं । आप भी ऐसा करने में सक्षम हो सकते हैं, अगर आप सत्संग के सहारे दिलमंदिर में जाने का प्रयास करें तो । आपके जीवन में कोई सुखद घटना घटे या दु:खद, आप अपने ही ज्ञान का सहारा लीजिये ।

एक बहुत अमीर सेठ थे । एक दिन वे बैठे थे कि नौकरानी भागती-भागती उनके पास आई और कहने लगी : ''सेठजी ! वह नौ लाख रूपयेवाला हार गुम हो गया ।''

सेठजी बोले : ''अच्छा, हुआ, भला हुआ ।''

उस समय सेठजी के पास उनका रिश्तेदार संबंधी बैठा था । उसने सोचा : बड़ा बेपरवाह है !

आधा घंटा बीता होगा कि नौकरानी फिर आई : ''सेठजी ! हार मिल गया ।''

सेठजी कहते हैं : ''अच्छा हुआ, भला हुआ ।''

वह रिश्तेदार प्रश्न करता है : ''सेठजी ! जब नौलक्खा हार चला गया तब भी आपने कहा- 'अच्छा हुआ... भला हुआ ।' ऐसा क्यों ?''

सेठजी कहते हैं : ''एक तो हार चला गया और ऊपर से क्या अपनी शांति भी चली जानी चाहिए ? अच्छा हुआ, भला हुआ । एक दिन तो सब कुछ छोड़ना पड़ेगा इसलिये अभी से थोड़ा-थोड़ा छूट रहा है तो आसानी रहेगी ।''

अंत समय में एकदम छोड़ना पड़ेगा तो बड़ी मुसीबत होगी । इसलिये दान-पुण्य करो तो औदार्य सुख भी प्रगट होगा और छोड़ने की आदत पड़े तो मरने के बाद इन चीजों का आकर्षण न रहे... भगवान की प्रीति मिल जाय ।

दान से अनेकों लाभ होते हैं । धन तो शुद्ध होता ही है, पुण्य की वृद्धि भी होती है तथा धन छोड़ने की आदत बन जाती है । छोड़ते-छोड़ते ऐसी आदत हो जाती है कि एक दिन जब सब छोड़ना है तो उसमें अधिक परेशानी न हो, ऐसा ज्ञान मिल जाता है जो दु:खों से रक्षा करता है ।''

रिश्तेदार फिर पूछता है : ''लेकिन जब हार मिल गया तब आपने 'अच्छा हुआ... भला हुआ' क्यों कहा ?''

सेठजी बोले : ''नौकरानी खुश थी, सेठानी खुश थी, उसकी सहेलियाँ खुश थी, इतने सारे लोग खुश हो रहे हैं तो अच्छा है, भला है । मैं क्यों दु:खी होऊँ ? वस्तुएँ आ जाएँ, चली जाएँ लेकिन मैं अपने दिल को क्यों दु:खी करूँ ? मैं तो यह जानता हूँ कि जो भी होता है अच्छे के लिये, भले के लिये होता है ।

जो हुआ अच्छा हुआ,
जो हो रहा अच्छा ही है ।
होगा जो अच्छा ही होगा,
यह नियम सच्चा ही है ॥

मेरे पास मेरे सद्गुरु का ऐसा ज्ञान है ।''

रिश्तेदार ने कहा : ''आप केवल बाहर के सेठ नहीं है गुरुज्ञान से हृदय के भी सेठ है ।''

हृदय का सेठ वह आदमी माना जाता है, जो दुःख में दुःखी न हो और सुख में अहंकारी व लम्पट न हो । मौत आ जाए तब भी उसको अनुभव होता है कि मेरी मृत्यु नहीं । जो मरता है वह मैं नहीं और जो मैं हूँ उसकी मौत नहीं होती ।

मान-अपमान आ जाएँ तो भी वह समझता है कि ये आने-जानेवाली चीजें हैं, अस्थाई हैं । स्थाई तो केवल परमात्मा है, जो एकमात्र सत्य है और वही मेरा आत्मा है । जिसकी समझ ऐसी है, वह बड़ा सेठ है, महात्मा है, योगी है, वही बड़ा बुद्धिमान है क्योंकि उसमें ज्ञान का दीपक जगमगा रहा है ।

संसार में जितने भी दुःख और जितनी भी परेशानियाँ हैं उन सबके मूल में बेवकूफी भरी हुई है । सत्संग से बेवकूफी कटती है, हटती जाती है और एक दिन वह आदमी पूरा ज्ञानी हो जाता है । अर्जुन को जब पूर्ण ज्ञान मिला है तभी वह पूर्ण संतुष्ट हुआ है । अपने जीवन में भी वही लक्ष्य होना चाहिए ।

वशिष्ठजी कहते हैं : ''हे रामजी ! सुमेरु पर्वत के शिखर तक का गंगा का प्रवाह चले और फिर रुक जाए तो उस अथाह बालू के कण तो शायद गिने जा सकते हैं, लेकिन इस जीव ने कितने जन्म लिये हैं, कितनी माताओं के गर्भों से बेचारा गुजरा है उसकी कोई गिनती नहीं । अगर उसे सद्गुरु मिल जाएँ, परमात्मा में प्रीति हो जाए और परम पद की प्राप्ति हो जाए तो यह जीव अचल शांति को, परमात्मा को पा सकता है । इस प्रकार यदि हम हृदयमंदिर में पहुँचकर अंतर्यामी ईश्वर का ज्ञान प्राप्त कर लें तो फिर माताओं के गर्भों में भटकना नहीं पड़ता ।

कबीरजी रामानंद स्वामी के शिष्य होना चाहते थे । उन दिनों में काशी में रामानन्द स्वामी अपने राम को सर्वत्र देखनेवाले महापुरुष के रूप में विख्यात थे ।

सियाराम मय सब जग जानी ।
करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानि ॥

ऐसा ज्ञान उन महापुरुष का था । ऐसे महापुरुष का शिष्य होना बड़े सौभाग्य की बात है । जिसे आत्मा-परमात्मा के एकत्व का ज्ञान है ऐसे सद्गुरु की प्राप्ति सहज संभव नहीं है । कबीरजी ऐसे महापुरुष का शिष्य होने का सौभाग्य प्राप्त करना चाहते थे । परन्तु उन दिनों जात-पाँत छुआ-छूत का प्रभाव अधिक था । कबीरजी ने सोचा कि नीरू जुलाहा के यहाँ पला होने के कारण मैं आसानी से तो रामानंदजी के श्रीचरणों तक नहीं पहुँच सकता हूँ । पर दीक्षा तो मुझे इन्हीं महापुरुष से लेनी है ।

रामानंद स्वामी खड़ाऊ पहने घाट की सीढ़ियाँ उतरते हुए स्नान के लिये आने लगे । दरवाजा पार किया, सीढ़ी पर लेटे हुए कबीरजी की छाती पर चरण जा पड़ा और रामानंदजी चौंक कर..., 'राम...राम' बोल उठे ।

कबीरजी ने युक्ति सोची । जिस घाट पर रामानंद स्वामी प्रातः स्नान के लिये जाते थे, उस घाट पर कबीरजी ने एक रात को घास-फूस की दीवार खड़ी कर दी और आने-जाने के लिए थोड़ा दरवाजे जैसा स्थान छोड़ दिया । रात में उसी स्थान से सटकर घाट की सीढ़ी पर कबीरजी लेट गये । ब्राह्ममुहूर्त के समय रामानंद स्वामी लकड़े की खड़ाऊ पहने घाट की सीढ़ियाँ उतरते हुए स्नान के लिये आने लगे । ज्यों ही उन्होंने दरवाजा पार किया, सीढ़ी पर लेटे हुए कबीरजी की छाती पर चरण जा पड़ा और रामानंदजी चौंक कर..., 'राम...राम' बोल उठे ।

कबीरजी को तो चरण-स्पर्श भी हो गया और राम-नाम की दीक्षा भी मिल गई । कबीरजी जुट गये राम-राम जपने में । मंत्र-जाप से उनकी सुषुप्त शक्तियाँ जागृत हुई और कबीरजी की वाणी माधुर्ययुक्त, प्रभावशाली होकर ज्ञान से प्रकाशित हो गई । होनी भी थी क्योंकि सिद्ध पुरुष द्वारा प्रदत्त मंत्र का जप कबीरजी ने लोभ व विकार छोड़कर किया था ।

पक्की हुई ? ''

रामानन्दजी बड़े प्रसन्न हुए । उन्होंने कहा :

''पंडितों ! तुम मुझे चाहे कैसा भी मानो लेकिन कबीर मेरा ही शिष्य है और मैं ही उसका गुरु हूँ । तुम चाहे मेरे पास आओ, चाहे न आओ ।''

सुपात्र मिला तो कुपात्र को
दान दिया न दिया ।
सुशिष्य मिला तो कुशिष्य को
ज्ञान दिया न दिया ।
सूरज उदय हुआ तो और
दीया किया न किया ॥
कहे कवि गंग सुन
शाह अकबर !
पूरन गुरु मिला तो और को
नमस्कार किया न किया ॥

''अब मेरा और कबीर का पक्का नाता हो गया है ।'' कबीरजी पंडितों की ओर देखकर मुस्कुराये ।

मार खाकर भी सिद्ध पुरुषों की मांत्री-दीक्षा मिले तब भी बेड़ा पार हो जाए ऐसा मैंने सुना है । कबीरजी की यह कथा कहीं कहीं पाठ भेद से भी आती है किन्तु दोनों कथाओं का सारांश सम रहता है ।

एक धर्मात्मा आदमी किसी जेल में गया । उसने देखा कि बेचारे कैदियों को रूखी-सूखी रोटी मिलती है । सदा ही ये बैंगन-आलू की सब्जी व बाजरे की रोटी खाते हैं । उसे दया आई तो उसने जेल में भंडारा कर दिया । कैदी बड़े खुश हुए ।

कुछ दिन बाद दूसरा धर्मात्मा गया । उसने देखा कि इन बेचारों को गर्म पानी पीना पड़ता है, गर्मी के दिन हैं । उसने शक्कर व बर्फ मँगवाकर शर्बत बनवाया और सबको जी-भरकर पिलाया । कैदी बड़े खुश हुए ।

सर्दियों के दिन आये । तीसरा सेठ जेल में आया और देखा कि ठंड के मारे बेचारे कैदी ठिठुरते रहते हैं । उसने स्वेटर, मफलर, कंबल, शाल आदि गर्म कपड़ें बोटे । कैदी खुश होकर उसकी जय-जयकार करने लगे ।

चौथा आदमी आया, जिसने न तो भंडारा किया, न शर्बत पिलाया और न कपड़े बाँटे । उसने कहा : ''यह लो चाबी । वो रहा ताला । खोलो और अपने घर जाओ''

अब बताइये-कैदियों की मुक्ति किससे हुई ? पहले आदमी ने भंडारा किया उससे ? दूसरे आदमीने ठंडा शर्बत पिलाया उससे ? तीसरे आदमी ने शाल-कंबल दिये उससे या चौथे आदमी के पास जो कुँजी थी, चाबी थी उससे ?

मानना पड़ेगा कि कुँजी ही सबसे बढ़िया चीज थी मुक्त होने की । ऐसे ही सद्गुरु भी कुँजी देते हैं । जीवात्मा को चौरासी लाख जन्मों से छुट्टी करके परमात्मा से मुलाकात करा देने की कुँजी देने का नाम ही है दीक्षा ।

सद्गुरु मेरा सूरमा, करे शब्द की चोंट ।
मारे गोला प्रेम का, हरे भरम की कोट ॥

मनुष्य सचमुच में महान से महान हो सकता है क्योंकि उसका वास्तविक संबंध महान से महान् अकाल पुरुष से जुड़ा है । जैसे कोई भी तरंग सड़क पर नहीं दौड़ती, पानी पर ही तरंग दौड़ती है, ऐसे ही तुम्हारा मन चैतन्य अकाल पुरुष की सत्ता से ही दौड़ता है और विचार करता है । इतने निकट हो तुम परमात्मा के ।

जो आद सत् है, युगों-युगों से सत है, अब भी सत् है और बाद में भी सत् रहेगा उस सत्यस्वरूप का ज्ञान देनेवाले सद्गुरु मिल जाएँ... ऐसे सत्यस्वरूप में प्रीति हो जाए...

मेरे गुरुदेव स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज एक बार आगरा में शाहगंज की श्रीकृष्ण गौशाला में ठहरे थे । वह गौशाला गुरुजी ने ही बनवाई थी । भोजन का समय था कि गुरुजी के पास उपलेटा गाँव (गुजरात) में रहनेवाले

(शेष पृष्ठ ४४ पर)

> *गुरुजी ने भोजन नहीं किया और भोयरे में चले गये । एक घंटा... दो घंटा... चार घंटा...*

> *गुरुदेव अपने शिष्य के लिए कितना त्याग करते हैं यह संसारी क्या जानें ?*

परिस्थितियों से प्रेम मत करो... उनके साक्षी बनो

गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है :

मोह सकल व्याधिन कर मूला ।
तातै ऊपजे पुनि भवशूला ॥

पुत्र को प्रेम करो, खूब करो किन्तु 'यह मेरा बेटा है' ऐसा मानकर प्रेम करोगे तो यह मोह हो जायेगा । मनुष्य 'यह मेरा है, यह पराया है...' ऐसा सोच-सोचकर ममता करता रहता है इसीलिए दु:खी होता रहता है । पुत्र-परिवार के साथ का प्रेम, प्रेम नहीं बचता, मोह बन जाता है । कोई कहता है कि 'फलाने व्यक्ति ने मुझे मदद की अतः मुझे उससे प्रेम हो गया' तो प्रेम उससे नहीं, उसके पैसों से हुआ है । जिस दिन वह मदद करना छोड़ देगा उस दिन प्रेम भी चला जायेगा । अगर उसके साथ वास्तविक प्रेम होता तो तुम्हारा परमात्मा के साथ प्रेम हो जाता ।

किसी परिस्थिति से यदि प्रेम हो जाये तो वह प्रेम स्थायी नहीं रहता ।

किसी परिस्थिति से यदि प्रेम हो जाये तो वह प्रेम स्थायी नहीं रहता । किसी राजा-महाराजा को देखकर यह मत सोचने लगना कि मैं भी उस पद पर पहुँच जाऊँ और सुखी होऊँ । वरन् तुम तो यही सोचना कि 'उसकी आत्मा और मेरी आत्मा एक ही चैतन्य परमात्मा से है । वहाँ मैं ही राजा होकर मजा ले रहा हूँ और यहाँ मैं ही प्रजा होकर देख रहा हूँ ।'

परमात्मा तो तुम्हारा ही आत्मा है । उसका तो कभी अदर्शन होता ही नहीं । केवल अपना अज्ञान छोड़ दो, अपनी बेवकूफी छोड़ दो । फिर तो वह हाजरा-हजूर (प्रत्यक्ष) है ।

एक शिष्य ने गुरु की हृदयपूर्वक खूब सेवा की । सेवा करते-करते उसका हृदय थोड़ा शुद्ध हुआ तो एक दिन वह बोला :

''गुरुजी ! मुझे परमात्मा का दर्शन कराने की कृपा करें ।''

''बेटा ! परमात्मा तो तुम्हारा ही आत्मा है । उसका तो कभी अदर्शन होता ही नहीं । केवल अपना अज्ञान छोड़ दे, अपनी बेवकूफी छोड़ दे । फिर तो वह हाजरा-हजूर (प्रत्यक्ष) है ।'' ऐसा कहकर गुरुजी ने थोड़ा सत्संग किया और पुन: कहा :

''जा बेटा ! थोड़ी देर एकान्त में घूमकर आ ।''

कई लोग प्राकृतिक वातावरण में घूमने जाते हैं तब भी किसीको साथ में ले जाते हैं और वृथा बातचीत करते रहते हैं । न तुम स्वयं बातचीत करो न किसी बातचीत करनेवाले को साथ में रखो । कभी-कभी एकान्त में जाओ ।

गुरुजी की आज्ञा मानकर शिष्य सरितातट पर घूमने गया । वहाँ उसने दो सारस पक्षी देखे । उन्हें देखकर उसके मन में विचार आया कि 'कैसे भी करके उनको पकड़कर ले जाऊँ और उनके रहने की व्यवस्था करके उन्हें रोज देखता रहूँ तो कैसा मजा आये !' ऐसा विचारते-विचारते वह पुन: आश्रम की ओर लौटा ।

गुरुजी ने पूछा : ''क्या देखा ? और तुम्हारे मन में क्या विचार आया ?''

तब उसने पूरी बातें गुरुजी को बता दी । गुरुजी ने कहा: ''ठीक है ।''

शिष्य थोड़े दिन बड़े मनोयोग से सेवा करता रहा । ध्यान भी करने लगा । उसका अंत:करण कुछ और शुद्ध हुआ

तब एक दिन गुरुजी ने कहा :

''अच्छा बेटा ! जाओ, जहाँ पहले गये थे वहाँ थोड़ा घूमकर आओ ।''

वह गुरुआज्ञा मानकर पुन: गया । फिर से वे ही दो पक्षी उसे दिखे । इस बार उनको पकड़कर ले जाने का भाव चला गया किन्तु मन में यह आया कि 'जब भी मैं आऊँ तो ये इसी तरह मिलते रहें तो कितना मजा आये !'

अब भी परिस्थिति की इच्छा तो है ।

गुरुजी के पूछने पर उसने सारी बात ज्यों की त्यों बता दी । कुछ समय के बाद पुन: गुरुजी ने उसे वहीं भेजा । उसे फिर से वे ही दो पक्षी दिखाई दिये । किन्तु इस बार उसे न उन्हें पकड़ने की इच्छा हुई, न वे मिलते रहें ऐसी इच्छा हुई । बल्कि 'कभी मैं ही ऐसा बनकर उड़ूँ तो कितना मजा आये ।' यह भाव आया ।

इस बार भी गुरुजी ने पूछा :

''तेरे मन में क्या विचार आया ?''

शिष्य : ''गुरुजी ! इस बार तो मुझे भी उनकी तरह उड़ने की इच्छा हुई ।''

गुरुजी ने थोड़ी तत्त्वज्ञान की बातें की । तत्त्वज्ञान की बातें सुनते-सुनते शिष्य में सत्‌शिष्यत्व का प्रागट्य होने लगा । उसकी समझ बढ़ने लगी । कुछ समय के पश्चात् गुरुजी ने फिर कहा :

''जा बेटा ! थोड़ा विचरण कर आ ।''

शिष्य गया तो फिर वे ही पक्षी मिले । इस बार उसे न उन्हें पकड़ने की इच्छा हुई, न वे मिलते रहें ऐसी इच्छा हुई और न ही उनकी तरह उड़ते रहने की इच्छा हुई । बल्कि इस बार उन्हें देखकर उसके हृदय में आनंद की अनुभूति हुई । इस बार उसके मन में विचार आया कि 'पक्षी होकर मैं ही तो उड़ रहा हूँ । कहीं शिष्य होकर सेवा कर रहा हूँ तो कहीं गुरु होकर उपदेश दे रहा हूँ । कहीं बालक बनकर रो रहा हूँ तो कहीं माँ बनकर चुप करा रहा हूँ । कहीं झोली लेकर माँगता हुआ दिख रहा हूँ, कहीं देता हुआ दाता दिख रहा हूँ । मैं ही आकाश की नांई सूक्ष्म ब्रह्म अनेक रूपों में विचरण कर रहा हूँ । ये सब रूप मेरे ही तो हैं । मेरे अनेक रूप हैं । मेरा मुझको धन्यवाद है ! मैं परिस्थिति नहीं, परन्तु परिस्थितियों का साक्षी हूँ । मैं ही सोहंस्वरूप हूँ । गुरुदेव ! आपकी जय हो ! आपकी कृपा से ही मुझे यह ज्ञान हुआ है ।' ऐसा करते-करते वह गुरुतत्त्व में स्थित हो गया ।

तत्त्वज्ञान की बातें सुनते-सुनते शिष्य में सत्‌शिष्यत्व का प्रागट्य होने लगा ।

अब उसे किसी परिस्थिति की जरूरत न रही, परिस्थितियों को सर्जने की भी जरूरत न रही । परन्तु जो सदा 'हाजरा-हजूर जागंदी ज्योत' है उसमें वह जग गया । आँखों से आध्यात्मिक ओज झलकने लगा और हृदय आध्यात्मिक तत्त्व की अनुभूति की खबरें देने लगा । वह आश्रम पहुँचा ।

आज उसे गुरुजी द्वार पर दिखे । आज तक तो गुरु के पास जाना पड़ता था । किन्तु आज तो गुरुजी स्वयं द्वार पर राह देखते हुए खड़े थे । गुरुजी ने पूछा : ''क्या हुआ ?''

आज तो शिष्य बोलने जाता है किन्तु बोल नहीं पाता । उसकी आँखें माधुर्य की खबरें दे रही हैं । हृदय आध्यात्मिकता से छलक रहा है । यह राज समझ में तो आता है किन्तु समझाया नहीं जाता । यह लाबयान है । सारे बयान इसीसे होते हैं ।

''ये सब रूप मेरे ही तो हैं । मेरे अनेक रूप हैं । मेरा मुझको धन्यवाद है ! मैं परिस्थिति नहीं, परन्तु परिस्थितियों का साक्षी हूँ । मैं ही सोहंस्वरूप हूँ ।''

आज शिष्य शिष्य न रहा, गुरु हो गया है । एक ही परमात्मा दोनों के हृदय में छलक रहा है । शिष्य गुरु के चरणों में जा गिरता है और गुरु उसे हृदय से लगा लेते हैं ।

धीरे-धीरे वह नशा थोड़ा पचा है । शिष्य की वाणी गुरु हुई है । शिष्य कहता है : ''गुरुजी ! वे पक्षी,

वह वातावरण, सब एक ही चैतन्य का विलास है और वह चैतन्य मैं ही हूँ । गुरुजी ! अब मैं क्या बनूँ... क्या बिगड़ूँ ? सब मेरे ही स्वरूप की तो लीला है !''

गुरुजी बोले : ''बेटा ! आज तुझे सत्य का पता चला है । आज तू अपने स्वरूप को प्राप्त कर मुक्तात्मा हुआ है ।''

❀

मंत्र तो क्या संकल्प भी सिद्ध होता है...

समर्थ रामदास एक बार अंबादास समेत कुछ शिष्यों के साथ पैदल यात्रा कर रहे थे । यात्रा करते-करते वे किसी बीहड़ जंगल से गुजरे । वहाँ उन्हें भूख और प्यास ने खूब सताया । पानी के लिए वे लोग इधर-उधर खूब भटके किन्तु पानी का कहीं पता न चला । बड़ी मुश्किल से एक पुराना कुआँ दिखा । उस कुएँ के पास में एक विशाल वृक्ष लगा था, जिसकी एक शाखा ठीक कुएँ के ऊपर थी । पेड़ की डालियों पर जो पक्षी बैठते थे, उनकी गंदगी कुएँ में जाती थी । पेड़ के पत्ते भी कुएँ में गिरते थे अतः कुएँ का पानी दुर्गन्धित हो गया था । फिर भी अत्यधिक प्यासे होने के कारण इन लोगों ने उस कुएँ का पानी छान-छून कर पी लिया ।

समर्थ रामदास ने अपने शिष्यों से कहा :

''इस कुएँ ने हम सबके प्राण बचाये हैं । कोई दूसरा पथिक भी यदि इस मार्ग से गुजरे और उसे प्यास लगे तो यह पानी काम में आयेगा । हम इस कुएँ की गंदगी दूर कर दें तो कितना अच्छा ? इस डाल को काट दें तो ?''

कुछ शिष्यों ने कहा : ''स्वामीजी ! यदि यह डाल काट दें तो काटनेवाला कुएँ में गिर जाएगा । अपना क्या ? अपन लोगों ने तो पानी पी ही लिया है । अब चलें ।''

लेकिन पक्के गुरुभक्त अंबादास ने देखा कि गुरुजी परहित की बात करते हैं । गुरुजी विश्राम के लिए थोड़ी देर एकांत में जा बैठे । उस समय अंबादास कुल्हाड़ा लेकर पेड़ पर चढ़ गया और वह शाखा काटने लगा जो ठीक कुएँ के ऊपर थी । दूसरे शिष्यों को लगा कि अब गिरा... अब गिरा... । गुरु समर्थ भी वहाँ आ पहुँचे और बोले : ''बेटा, यहाँ तो खतरा है !''

अंबादास : ''गुरुदेव ! आपका आशीर्वाद मेरे साथ है ।''

समर्थ : ''बेटा, गिर तो नहीं जायेगा ?''

अंबादास : ''गुरुदेव ! आपके आशीर्वाद से नहीं गिरूँगा और यदि गिर भी गया तो क्या है ? आप तो इस अथाह संसार-सागर से जीवों को तारते हैं तो फिर जरा-से कुएँ से भी आप निकाल ही लेंगे । आपका कार्य है और आप ही संभाल रहे हैं, गुरुदेव ।''

समर्थ रामदास ने एक मधुर निगाह अंबादास पर डाली और स्वयं दूर जाकर बैठ गये । अंबादास उसी खतरनाक जगह पर खड़े होकर शाखा काटने लगा । इतने में बवंडर आया और हवा के जोरदार झोंके से अंबादास, कुल्हाड़ा और पेड़ की शाखा, तीनों धड़ाम् से कुएँ में जा गिरे । सब शिष्य दौड़कर आये । समर्थ रामदास भी वहाँ आये । देखा तो पेड़ की वह शाखा इस प्रकार गिरी थी कि उसके ऊपरी भाग पर अंबादास आराम से बैठा था, मानो किसी नाव में बैठा हो । उसे तो ऐसा लगा मानो किसी स्प्रिंगदार वस्तु पर छलांग लगाई हो । कुएँ में पानी भी ज्यादा न था । अंबादास को जरा-सी खरोंच भी नहीं आयी । जब अंबादास गिरा, तब दूसरे शिष्यों को ऐसा लगा कि कहीं वह मर न गया हो । किन्तु जिसकी भक्ति दृढ़ हो, गुरु की बात मानता हो वह शिष्य भी कहीं अकाल मौत मर सकता है ?

गुरुजी की आज्ञा से सबने मिलकर अंबादास को बाहर निकाला । कुल्हाड़ा भी मिला । अंत में पेड़ की शाखा को भी खींच लिया । फिर अंबादास को देखकर पूछने लगे :

> *''गुरुदेव ! आपके आशीर्वाद से नहीं गिरूँगा और यदि गिर भी गया तो क्या है ? आप तो इस अथाह संसार-सागर से जीवों को तारते हैं तो फिर जरा-से कुएँ से भी आप निकाल ही लेंगे ।*

"तुम्हें कुछ नहीं लगा है न ?" देखा तो एक नाखून तक को जरा-सी भी चोट नहीं आयी थी ।

समर्थ बोले : "बेटा ! तुझे जरा-सा भी नहीं लगा न ?"

अंबादास ने कहा : "गुरुदेव ! सब आपकी दया है । आपने मेरा कल्याण कर दिया ।"

तब समर्थ बोले : "बेटा ! मैंने तेरा कल्याण नहीं किया, बल्कि तूने मेरे सत्संग को ध्यान से सुना । तू नियमानुसार जप-ध्यान करता है । सावधानी से कार्य करता है, अतः प्रकृति की इस दुर्घटना के होने पर भी, मेरे भगवान ने तुझे बचा लिया । मैंने तो तेरा क्या कल्याण किया ? पर बेटा ! तेरी श्रद्धा-भक्ति ने, तेरी तत्परता ने, तेरी दृढ़ता ने ही तेरा कल्याण कर दिया । आज से तेरा नाम मैं 'अंबादास' नहीं, 'कल्याण' रखता हूँ ।"

हवा के जोरदार झोंके से अंबादास, कुल्हाड़ा और पेड की शाखा तीनों धड़ाम् से कुएँ में जा गिरे ।

अब अंबादास 'कल्याण' के नाम से जाना जाने लगा । समर्थ रामदास यात्रा करते जा रहे थे । एक बार कल्याण को लेकर किसी गाँव से रवाना हुए । गाँव दो-तीन मील पीछे रह गया । समर्थ रामदास ने कहा: "बड़े तो लाया है लेकिन ये सूखे-सूखे बड़े दूध में भीगोकर खाये होते तो अच्छा रहता । गाँव तो पीछे रह गया, कल्याण ! अब क्या करें ?"

"बेटा ! मैंने तेरा कल्याण नहीं किया, बल्कि तूने मेरे सत्संग को ध्यान से सुना । तू नियमानुसार जप-ध्यान करता है । सावधानी से कार्य करता है, तेरी श्रद्धा-भक्ति ने, तेरी तत्परता ने, तेरी दृढ़ता ने ही तेरा कल्याण कर दिया ।

कल्याण : "गुरुदेव ! आप यहाँ आराम कीजिए । मैं अभी दूध लेकर आता हूँ ।"

रामदास : "बेटा ! बहुत देर हो चुकी है, लोगों ने दूध दोह लिया होगा ।"

कल्याण : "गुरुदेव ! मैं अभी लेकर आता हूँ ।"

कल्याण लोटा लेकर गाँव की ओर जाने लगा । गाँव में एक लँगड़ी गाय को एक महिला दुहने गई । गाय कुछ ऐसी ही शैतान थी । उस महिला ने गाय को ताड़ना चाहा तो गाय भड़की, कूदी और रस्सी तोड़कर भाग निकली । वह महिला भी लकड़ी लेकर पीछे दौड़ी । गाय उसी दिशा में भाग रही थी, जिस दिशा से समर्थ का शिष्य कल्याण लोटा लेकर आ रहा था । दौड़ते-दौड़ते गाय अचानक एक गड्ढे में गिर पड़ी ।

वह महिला अपना सिर कूटकर बोलने लगी : "हाय रे हाय ! मेरी एक पावभर दूध देनेवाली गाय भी..."

इतने में कल्याण आ पहुँचा । कल्याण मन में विचारता है कि 'क्या गुरुदेव की कृपा है ! गाय भी इधर है और गाय की स्वामिनी भी इधर है । कल्याण थोड़ा गाय की ओर देखता है, थोड़ा उस महिला की ओर देखता है । वह महिला तो रो रही थी और गुस्से में भी थी ।

कल्याण ने कहा : "माताजी ! एक लोटा भरकर दूध दोगी ?"

रोती हुई उस महिला को हँसी आ गयी और बोली : "यह बकेन (जिसे ब्याये ज्यादा समय हो गया हो ऐसी) गाय है । कुल मिलाकर पाव भर दूध ही देती है और तुम इतना बड़ा लोटा भरकर दूध माँग रहे हो ? तो क्या लोटा भरकर दूध निकलता होगा ? एक तो लँगड़ी गाय है, दुहने भी नहीं देती । ले, ये तेरी माँ बैठी है, लोटा भरकर दूध निकाल ले ।"

कल्याण : "माताजी ! अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं स्वयं ही दोह लूँ ।"

उस महिला ने स्वीकृति दे दी । कल्याण तो था गुरुभक्त । उसने गुरु का स्मरण किया और गाय के सिर पर प्रेम से हाथ फिराया । फिर बोला : "हे कल्याणी ! हे गौमाता ! मेरे गुरुदेव वृद्ध हैं । उनको दूध में बड़े भीगोकर देना है । उठो, जरा एक लोटा भरकर दूध दे दो ।"

मानो गाय कल्याण की बात सुनने का ही इंतजार कर रही हो । जैसे कोई समझदार व्यक्ति गुरु की आज्ञा

मानकर उठ खड़ा हो ऐसे ही वह गाय उठी और कल्याण ने दूध दुहकर लोटा भर लिया। वह महिला टुकर-टुकर देखती ही रही कि ये इतना दूध कभी नहीं देती, लोटा कैसे भरा ? कल्याण झाग उतारकर फिर लोटा भरता है। पूरा लोटा भरकर उस महिला से बोलता है : ''माताजी ! जय सीयाराम।''

महिला ने पूछा : ''यह कौन सा मंत्र है कि गाय ने इतना सारा दूध दे दिया ? मुझे भी बता दो।''

कल्याण बोला ''यह गुरुकृपा का मंत्र है। गुरु के आशीर्वाद का मंत्र है।''

> *''यह बकेन गाय है। कुल मिलाकर पाव भर दूध ही देती है और तुम इतना बडा लोटा भरकर दूध माँग रहे हो ?*

भगवान शंकर पार्वती से कहते हैं :

गुरुमंत्रो मुखे यस्य, तस्य सिद्धयन्ति नान्यथा।
दीक्षया सर्वकर्माणि सिद्धयन्ति गुरुपुत्रके ॥

'जिसके मुख में गुरुमंत्र है, उसके सब कार्य सिद्ध होते हैं, दूसरे के नहीं। दीक्षा के कारण शिष्य के सर्व कार्य सिद्ध हो जाते हैं।' (श्री गुरुगीता : श्लोक-१३३)

जिसका गुरुमंत्र सिद्ध हो जाता है उसकी तो क्या बात है ! और गुरुमंत्र की सिद्धि कैसे होती है ? जिस पर गुरु संतुष्ट होते हैं, उसका गुरुमंत्र जल्दी सिद्ध होता है।

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततप: क्रिया:।
ता: सर्वा: सफला देवि गुरुसंतोषमात्रत: ॥

भगवान शिव पार्वतीजी से कहते हैं : ''हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ ये सब गुरुदेव के संतोष-मात्र से सफल हो जाते हैं।'' (श्रीगुरुगीता : श्लोक-१४९)

कोई ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु यदि प्रसन्न हो जायें तो फिर उनके मंत्र को सिद्ध होने में बरसों नहीं लगते, अरे ! महीने भी नहीं लगते। उसका मंत्र तो क्या उसके संकल्प भी सिद्ध होने लगते हैं।

धन्य है सद्गुरु और धन्य है गुरुभक्त ॥

❀

(पृष्ठ २६ का शेष)

नहीं, तुम तो चैतन्य हो।

सद्गुरु का राम कोई दशरथ के घर का आया हुआ राम नहीं, रोम-रोम में जो परमात्मा चेतन बस रहा है. उसको सद्गुरु राम करते हैं।

दशरथ राजा भी 'राम...राम...' जपते थे। रघुराजा भी 'राम...राम...' जपते थे। भगवान राम के बाप के बाप, उनके भी बाप 'राम...राम...' जपते थे। वह राम कोई भगवान रामचन्द्रजी, सीतापति राम का नाम नहीं परंतु जो रोम-रोम में रम रहा है उसका नाम राम है। वह अभी भी तुम्हारे रोम-रोम में रम रहा है।

उस रोम-रोम में रमते हुए राम की शीतलता और चेतनता प्रगट करने का यदि सामर्थ्य है तो सद्गुरु में है।

अज्ञान को हरण करने का सामर्थ्य, ज्ञान और वैराग्य को प्रगट करने का सामर्थ्य जन्म-मरण के पाश को काटने का सामर्थ्य है तो गुरु के कृपाकटाक्ष में है। इसलिए उनका सदा सेवन करते रहो।

किसीका धन-दौलत, सुख-वैभव आदि सांसारिक प्रलोभन, नष्ट हो जानेवाले पदार्थ देखकर उनकी ओर लालायित नहीं होना चाहिये। अविनाशी आत्मा को पाने के लिये इच्छाएँ मिटानी चाहिये, न कि भोगों को पाने की इच्छाएँ करनी चाहिये। 'ऐसे दिन कब आयेंगे कि अकृत्रिम आन्नद को पाऊँगा ?... नश्वर भोगों की लालसा मिटाकर शाश्वत आत्मा में स्थिर होऊँगा ?... देह होते हुए भी विदेही तत्त्व में प्रतिष्ठित हो जाऊँगा ?'-इस प्रकार की परमात्म-प्राप्ति की इच्छा जोर पकड़ेगी तो तुच्छ इच्छाएँ, नश्वर चीजों की इच्छाएँ, मिटनेवाले संयोगों की इच्छाएँ हटकर अमर आत्मा में स्थिति होने लगेगी। ॐ...ॐ...ॐ...

❀

जल से चिकित्सा

हमारे देश का स्वास्थ्य तथा उसकी चिकित्सा एलोपैथी की महँगी दवाइयों से उतनी सुरक्षित नहीं, जितना हमें आयुर्वैदिक तथा ऋषिपद्धति के उपचारों से लाभ मिलता है । आज विदेशी लोग भी हमारे आयुर्वैदिक उपचारों की ओर आकर्षित हो रहे हैं । हमें भी चाहिये कि हम 'साईड इफेक्ट' करनेवाली एलोपैथी की महँगी दवाओं से बचकर प्राकृतिक आयुर्वैदिक उपचार को ही अपने जीवन में उतारें ।

हम यहाँ अपने पाठकों के लिये विभिन्न रोगों के उपचार के रूप में चार प्रकार के जल-निर्माण की विधि बता रहे हैं जो अनुभूत एवं असरकारक नुस्खे हैं ।

(१) सोंठ जल : पानी की तपेली में एक पूरी साबूत सोंठ डालकर पानी गरम करें । जब अच्छा उबलकर पानी आधा रह जावे तब उसे ठंडा कर दो बार छानें । ध्यान रहे कि इस उबले हुए पानी के पैंदै में जमा क्षार छाने हुए जल में न आवे । अत: मोटे कपड़े से दो बार छानें । यह जल पीने से पुरानी सर्दी, दमा, टी.बी., श्वास के रोग, हाँफना, हिचकी, फेफड़ों में पानी भरना, अजीर्ण, अपच, कृमि, दस्त, चिकना आमदोष, बहुमूत्र, डायबिटिज (मधुमेह), लो ब्लडप्रेशर, शरीर का ठंडा रहना, मस्तक पीड़ा जैसे कफदोष जन्य तमाम रोगों में यह जल अवश्य ही लाभ देता है । बिना पैसे की दवा, यह जल उपरोक्त रोगों की अनुभूत एवं उत्तम औषध है । यह जल दिन भर पीने के काम लावें । रोग में लाभप्राप्ति के पश्चात् भी कुछ दिन तक यह प्रयोग चालू ही रखें ।

(२) धना-जल : एक लीटर पानी में एक से डेढ़ चम्मच सूखा(पुराना) खड़ा धनिया डालकर पानी उबालें । जब ७५० ग्राम जल बचे तो ठंडा कर उसे छान लें । यह जल अत्यधिक शीतल प्रकृति का होकर पित्तदोष, गर्मी के कारण होनेवाले रोगों तथा पित्त की तासीरवाले लोगों को अत्यधिक वांछित लाभ प्रदान करता है । गमी-पित्त के बुखार, पेट की जलन, पित्त की उल्टी, खट्टी डकार, अम्लपित्त, पेट के छाले, आँखों की जलन, नाक से खून टपकना, रक्तस्राव, गर्मी के पीले-पतले दस्त, गर्मी की सूखी खाँसी, अति प्यास तथा खूनी बवासीर (मस्सा) या जलन-सूजन वाले बवासीर जैसे रोगों में यह जल अत्यधिक लाभप्रद है । अत्यधिक लाभ के लिये इस जल में शक्कर मिलाकर पीवें । जो लोग कॉफी तथा अन्य मादक पदार्थों का व्यसन करके शरीर का विनाश करते हैं उनके लिये इस जल का नियमित सेवन लाभप्रद तथा विषनाशक है ।

(३) अजमा-जल : एक लीटर पानी में ताजा नया अजमा एक चम्मच (करीब ८.५ ग्राम) मात्रा में डालकर उबालें । आधा पानी रह जाए तब ठंडा करके छान लें व पीवें । यह जल वायु तथा कफदोष से उत्पन्न तमाम रोगों के लिये अत्यधिक लाभप्रद उपचार है । इसके नियमित सेवन से हृदय की शूल पीड़ा, पेट की वायु पीड़ा, ऑफरा, पेट का गोला, हिचकी, अरुचि, मंदाग्नि, पेट के कृमि, पीठ का दर्द, अजीर्ण के दस्त कॉलरा, सर्दी, बहुमूत्र, डायबिटिज़ जैसे अनेक रोगों में यह जल अत्यधिक लाभप्रद है । यह जल उष्ण प्रकृति का होता है ।

(४) जीरा-जल : एक लीटर पानी में एक से डेढ़ चम्मच जीरा डालकर उबालें । जब ७५० ग्राम पानी बचे तो उतारकर ठंडा कर छान लें । यह जल धना जल के समान शीतल गुणवाला है । वायु तथा पित्तदोष से होनेवाले रोगों में यह अत्यधिक हितकारी है । गर्भवती एवं प्रसूता स्त्रियों के लिये तो यह एक वरदान है । जिन्हें रक्तप्रदर का रोग हो, गर्भाशय की गर्मी के कारण बार-बार गर्भपात हो जाता हो अथवा मृत बालक का जन्म होता हो या जन्मने के तुरंत बाद शिशु की मृत्यु हो जाती हो, उन महिलाओं को गर्भकाल के दूसरे से आठवें मास तक नियमित जीरा-जल पीना चाहिये ।

एक-एक दिन के अंतर से आनेवाले, ठंडयुक्त एवं मलेरिया बुखार में, आँखों में गर्मी के कारण लालपन, हाथ-पैर में जलन, वायु अथवा पित्त की उल्टी (वमन), गर्मी या वायु के दस्त, रक्तविकार, श्वेतप्रदर, अनियमित मासिक स्राव, गर्भाशय की सूजन, कृमि, पेशाब की अल्पता इत्यादि रोगों में इस जल के नियमित सेवन से आशातीत लाभ मिलता है । बिना पैसे की औषधि... । इस जल से विभिन्न रोगों में चमत्कारिक लाभ मिलता है ।

❀

वनस्पति घी कितना खतरनाक

सुरसा के समान मुँह फैलाती इस महँगाई के युग में निर्धन तथा मध्यम परिस्थिति के लोग अपने भोजन में असली (शुद्ध) घी नहीं खाते हुए वनस्पति घी का इस्तेमाल करते हैं जिसे डालडा आदि नामों से जाना जाता है । विवाह, सामूहिक भोजन तथा मिठाईघरों में भी अधिकांशतः वनस्पति घी का ही उपयोग किया जाता है क्योंकि कीमत की दृष्टि से यह खाद्य तेलों के भाव में ही उपलब्ध हो जाता है ।

बहुत कम लोग जानते हैं कि वेजिटेबल घी, वनस्पति घी तथा डालडा आदि के नामों से प्रचलित यह पदार्थ क्या है ? कैसे बनता है ? उसके गुणधर्म क्या हैं ? इस घी में शुद्ध घी के समान कोई भी लाभकारी गुण नहीं है । यह तो कृत्रिम रीति से उत्पन्न किया गया एक प्रकार का वनस्पति तेल मात्र है, जिसका समाज में जबसे प्रचलन बढ़ा है तबसे मानवजाति में विभिन्न प्रकार के रोगों ने जन्म लिया है । यह निर्विवाद सत्य है ।

निर्माण विधि :

वनस्पति घी के निर्माण में विविध प्रकार के तेलों का सम्मिश्रण किया जाता है जिसमें हल्की किस्म के हानिकारक तेलों की मात्रा अधिक तथा मूँगफली एवं तिल के तेल की मात्रा अत्यल्प रहती है । इस मिश्रण को एक निकल के बड़े पात्र में एकत्र कर उसमें वनस्पति तथा जीवित प्राणियों को मारकर उनके माँस से निकाली गई चरबी मिलाई जाती है । तत्पश्चात् इसकी बदबू दूर करने के लिये उसमें कॉस्टिक सोडा, निकल धातु का पावडर, हाइड्रोजन गैस तथा स्वास्थ्य के लिये अति हानिकारक अन्य रासायनिक पदार्थ मिश्रित किये जाते हैं । इन रसायनों से तेल में रहनेवाला पानी दूर होकर यह सफेद घी जैसा रंग तथा गाढ़ापन प्राप्त करता है ।

मिश्रित किये हुए तेलों में रासायनिक प्रक्रिया किये जाने से उस तेल के प्राकृतिक गुण नष्ट होकर रासायनिक गुण उत्पन्न होते हैं जो मानव शरीर के लिये अत्यधिक घातक होते हैं ।

उत्पादकों द्वारा इस नकली घी के पेकिंग पर तथा टी.वी. व अखबारों में प्रचार के दौरान यह लिखा जाता है कि इस घी में विटामिन 'ए' तथा 'डी' मिलाकर इसे अधिक पौष्टिक बनाया गया है, लेकिन ये विटामिन 'ए' तथा 'डी' शार्क या कॉड नामक मछली के तेल के रूप में अथवा मृत पशुओं के माँस की चरबी मिलाकर डाला जाता है । यह हकीकत वनस्पति घी खानेवाले कितने ही शिक्षित लोग भी जानते हैं फिर भी उत्पादकों द्वारा इस नकली घी में सुगंध छोड़ी जाती है तथा आकर्षक पेकिंग में भ्रामक प्रचार के साथ इसे समाज में भेजा जाता है । जिससे पैसा बचाने की लालच में जानते हुए भी लोग इसीका उपयोग करते हैं ।

गुणों में यह एकदम घटिया किस्म का तथा लाभ के बदले हानि पहुँचानेवाला है । इसमें मिश्रित चरबी तथा मछली के अखाद्य तेलों को दृष्टिगत करते हुए चुस्त शाकाहारी तथा धार्मिक विचारों के लोगों को यह घी खाना चाहिये या नहीं ? इसका निर्णय आप ही कीजियेगा ।

महात्मा गांधी तथा भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने भी इस नकली घी के सेवन न करने का अनुरोध प्रजा से किया था । विश्व के अनेक वैज्ञानिक तथा डॉक्टर भी समय-समय पर इसके दुष्परिणामों से जनता को अवगत कराते रहे हैं । इसके बावजूद भी अधिकांश परिवारों में इसका सेवन आज भी यथावत है ।

अनेक मिलावटखोर व्यापारी अधिक लाभ कमाने की दृष्टि से शुद्ध घी में इस नकली घी की मिलावट

श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र के मैदान में शंखनाद किया था और पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज ने सिंहस्थ कुंभ पर्व (१९९२) उज्जैन में प्राचीन भारत की ब्रह्मविद्या का, प्रभुप्रेम का, योग और वेदान्त अमृत का शंखनाद गुंजा दिया।
सिंहस्थ कुंभ पर्व उज्जैन में संत श्री आसारामजी नगर का मुख्य प्रवेशद्वार।
संत श्री आसाराम जी महाराज स्वर्ण जयंती महोत्सव
अखिल भारत साधु समाज के सातवें अधिवेशन, उज्जैन में वरिष्ठ अग्रगण्य संतों, मंडलेश्वरों, शंकराचार्यों, महंतों, मठाधीशों, विरक्तों के बीच विराट धर्मपरायण जनता के समक्ष भारतीय संस्कृति के विषय में पूज्यश्री का प्रभावशाली मार्गदर्शक प्रवचन।
अखिल भारतीय संत समा ७वाँ महाधिवेशन उज्जैन
सिंहस्थ कुंभ पर्व (१९९२) उज्जैन के संत-सम्मेलन में उपस्थित संतों एवं जनता...

हमारी रेलगाड़ी हिम्मतनगर के पास पहुँची तो एक बड़ी चट्टान टूटकर इंजिन और उसके पासवाले डिब्बे पर इतनी जोर से गिरी कि मानो बम फूटा या बिजली गिरी हो । गाड़ी में लोग सीटों से नीचे गिर पड़े । हमारे साथ यात्रा करनेवाले २२ लोगों को चोट लगी और दो रेलवे कर्मचारी तो वहीं प्रभु के प्यारे हो गये लेकिन मुझे और मेरे पाँच साथियों को पूज्य श्री गुरुदेव की कृपा से कुछ भी नहीं हुआ । पूज्यश्री के वचन-'जो शिष्य गुरुमंत्र जाप करने की माला गले में पहन रखता है उसकी किसी भी दुर्घटना में रक्षा होती है' - याद आते ही हृदय भावविभोर हो गया । पूज्यश्री की महिमा गायी जाती है कि :

सभी शिष्य रक्षा पाते हैं ...
सूक्ष्म शरीर गुरु आते हैं ...

इन पंक्तियों का मुझे प्रत्यक्ष अनुभव हो गया ।

दिनांक : २५-७-९४ के दैनिक समाचार पत्र 'राजस्थान पत्रिका' एवं अन्य अखबारों में मुख्य पृष्ठ पर हेड लाईनें छपीं थीं कि 'चट्टान टूटने से हिम्मतनगर के पास रेल दुर्घटना' । इसी दुर्घटना में हम फँसे थे लेकिन गुरुकृपा से बाल-बाल बच गये ।

धन्य हैं परम कृपालु गुरुदेव और धन्य है उनका आध्यात्मिक परम प्रसाद ! लाखों लाखों भाग्यवान भक्तों को भी धन्य है जो इस कलिकाल में ऐसे सच्चे समर्थ सत्पुरुष से मंत्रदीक्षा प्राप्त करके अपने हृदय में मंत्र की जागृति करके मधुर बन जाते हैं !

गुरुदेव ने रेलवे दुर्घटना में रक्षा की

मैं २२ जुलाई १९९४ को अहमदाबाद आश्रम में गुरुपूर्णिमा महोत्सव का लाभ लेने के लिए आया था । मेरे भाग्य खुल गये और दिनांक २३ जुलाई की प्रभात में पूज्यश्री से मंत्रदीक्षा प्राप्त कर मैं धन्य हो गया ।

मंत्रदीक्षा के समय पूज्यश्री ने हम सब साधकों-शिष्यों को मंत्र के गूढ़ रहस्यों को समझाने के बाद कहा था कि जो शिष्य गुरुमंत्र जपने की माला गले में पहनकर रखता है उसकी अनेक विपत्तियों से रक्षा होती है । मुझे सद्गुरुदेव के इन वचनों का तुरन्त ही साक्षात्कार हो गया ।

पूज्यश्री के मधुर मधुर पावन पावन सान्निध्य में मंत्रदीक्षा, ध्यान, सत्संग व कीर्तन का भरपूर लाभ लेकर हम उदयपुर जानेवाली रेलगाड़ी से उदयपुर वापस लौट रहे थे । उस समय हृदय में ऐसा महसूस हो रहा था कि मंत्रदीक्षा के बाद कोई मधुर अलौकिक अपूर्व खजाना साथ लिये जा रहे हैं । रोम-रोम में आनन्द छलक रहा था । पूज्यश्री के वचनों पर पूर्ण श्रद्धा रखकर मैंने मंत्रदीक्षावाली माला गले में पहन रखी थी । मेरे साथ उदयपुर के पाँच अन्य साधक भी थे । बाहर रेलयात्रा चल रही थी और हमारे भीतर ही भीतर गुरुमंत्र जाप की यात्रा चल रही थी ।

- सावन्तसिंह
मकान नं. ५६, डोरेनगर, उदयपुर (राज.)

❀

जिनके नामजप से दोनों किडनी ठीक हुई

मेरा पुत्र पीयूष अक्सर बीमार रहता था । मैंने अनेक हकीमों-डॉक्टरों के देशी-विदेशी इलाज करवाये

लेकिन कुछ असर न हुआ । मर्ज बढ़ता ही गया, ज्यों-ज्यों दवा की । अन्ततः रावतभाटा (कोटा) के अस्पताल में मैंने उसका चेकअप करवाया । वहाँ के डॉक्टर को रोग कुछ समझ न आया तो उन्होंनें केस बॉम्बे के जसलोक हॉस्पिटल में रेफर कर दिया ।

चेकअप के दौरान जसलोक में मुझे यह पता चला कि इस बच्चे की दोनों किडनी खराब हैं । इस बीच मेरी पत्नी मेरे एक मित्र के यहाँ पर गई । वहाँ उसे पूज्य बापूजी के विडियो तथा ऑडियो सत्संग का लाभ मिला । पूज्यश्री के इस प्रथम दर्शन से ही वह बहुत आनंदित हुई तथा उसी दिन से उसने हरि ॐ का जप तथा श्रीआसारामायण का पाठ आरंभ कर दिया । जब उसे रोग का पता चला तो उसे भी मानसिक आघात पहुँचा ।

मैं अपनी पत्नी व पीयूष के साथ दो माह जसलोक हॉस्पिटल बॉम्बे रहा । उपचार चलता रहा लेकिन कुछ फर्क नहीं पड़ा । ३० नवम्बर ९२ से मूत्रमार्ग से उसे रक्त प्रवाह शुरू हो गया तथा चिकित्सकों के काफी उपचार के बाद भी बन्द नहीं हो रहा था ।

मेरी पत्नी और पुत्र दोनों 'बापू-बापू व हरि ॐ-हरि-ॐ' का जप करते व दृढ़ श्रद्धा भक्ति से प्रार्थना करते । मैं तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा हो गया । १४ दिसम्बर की रात को भी मेरी पत्नी व पुत्र, दोनों श्रद्धा से पूज्य बापू का नामस्मरण करते रहे तथा बापू के नाम से ही अभिमंत्रित जल पत्नी उसे पिलाती रही । उसने प्रण कर लिया कि 'बापू ! यदि यह बच्चा जिन्दा रहा तो आपके पतितोद्धारक पावन श्रीचरणों में नमन करने अवश्य ही आऊँगी ।'

...और महान आश्चर्य... ! उसी रात्रि में धवल वस्त्रधारी अपने तेजोमय दिव्य स्वरूप में पूज्य बापू पीयूष के स्वप्न में आये तथा उसकी किडनी पर हाथ घुमाते हुए कहा : 'जा, तुझे कुछ नहीं होगा ।' इतना आशीर्वाद देकर मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए वे महापुरुष अन्तर्धान हो गये ।

सचमुच, पीयूष प्रातः पूर्ण स्वस्थ व तेजस्वी नजर आ रहा था, मानो उसे कुछ हुआ ही न हो । न मूत्र में रक्त, न किडनी में दर्द... । हम आश्चर्यचकित... डॉक्टर लोग हैरान... और जिसने सुना वह विस्मित नेत्रों से बस देखता ही रह गया, लेकिन वेद भी जिनकी महिमा का बयान करने में असमर्थता जाहिर कर नेति-नेति कहते हैं ऐसे ही आत्म-मस्ती में रमण करनेवाले एक परम वेदान्ती संत प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद श्री आसारामजी बापू की महिमा का हम भला क्या बयान करें ?

डॉक्टरों का दल अचम्भित रह गया खोज-खोजकर कि आखिर यह संभव कैसे हो गया, लेकिन कुछ हाथ न लगा और दो माह से बेकार पड़ी दोनों किडनियाँ स्वप्न में बापू की दुआ मात्र से ठीक हो गई । किसी संत ने ठीक ही कहा है :

जो बात दवा से न बने
वो दुआ से होती है ।
जब कामिल मुर्शिद मिलते हैं
तो बात खुदा से होती है ॥

पू. बापू की कृपा से आज हमारा पुत्र पूर्ण स्वस्थ है । हमारे प्राणाधार स्वामीजी का हम किस तरह बयान करें ? हम नासमझ कुछ नहीं जानते । हमारे संपूर्ण परिवार ने शिवरात्रि '९३ के शिविर में अजमेर में पूज्य बापू के जी भरकर दर्शन किये तथा हम पति-पत्नी ने पूज्यश्री से मंत्रदीक्षा प्राप्तकर अपना जीवन धन्य किया ।

जिनका श्रद्धा-भक्ति से लिया गया नाम असाध्य रोग ही क्या ? जन्म-मरण के रोग भी मिटा देता है और ऐसे सद्गुरु से दीक्षा-प्राप्ति का स्वर्णिम अवसर जब हाथ लगे तो जीवन में अद्भुत अनुभूतियों का खजाना खुल जाता है ।

- वचनसिंह
टाऊनशिप कालोनी,
H/2/B/44 रावतभाटा, कोटा, राजस्थान ।

अहमदाबाद आश्रम के टेलिफोन नम्बर में परिवर्तन

पुराने नम्बर	नये नम्बर
486310	7486310
486702	7486702

संस्था-समाचार

हृषीकेश में स्वर्गाश्रम स्थित वेदनिकेतन धाम में पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में गीता भागवत सत्संग समारोह का विशाल आयोजन हुआ। हृषीकेश की जनता आत्मानंद को छूकर आती हुई इन अनुभव-सम्पन्न संत की अमृतवाणी का लाभ लेकर धन्य हो उठी। हजारों साधु-संतों ने संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा संचालित अन्नक्षेत्र तथा आमरस के भंडारे का भरपूर प्रसाद ग्रहण किया।

पूज्यश्री के एकान्तवास के दौरान यहीं विश्व हिन्दू परिषद के अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल ने पूज्य बापू के दर्शनलाभ लेकर विभिन्न मुद्दों पर घंटों भर चर्चा की एवं मार्गदर्शन प्राप्त किया।

हरिद्वार में सप्त सरोवर क्षेत्र गीता कुटीर में नवनिर्मित विशाल गीता मंदिर में विभिन्न देवी-देवताओं की प्रतिमाओं का प्राणप्रतिष्ठा समारोह पूज्यपाद बापू के पावन करकमलों से हुआ। यहीं एक दिवसीय गीता-भागवत सत्संग समारोह का आयोजन भी पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में हुआ। पूज्यश्री के स्वागत-भाषण में बोलते हुए गीता कुटीर के संस्थापक स्वामी श्री गीतानंदजी महाराज ने कहा कि : ''वे घड़ियाँ धन्य होती हैं जब किसी तत्त्ववेत्ता महापुरुष का सत्संग मिलता है। स्वामी श्री आसारामजी महाराज यहाँ पधारे, यह हमारे परम सौभाग्य की बात है। ऐसे विनम्र, उदार, दयालु तथा 'बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय' देश के कोने-कोने में घूम-फिरकर प्रभुनाम की मस्ती लुटाने वाले संत सौभाग्य से ही हमारे बीच आते हैं।'' हरिद्वार की जनता ने बड़ी ही आत्मीयता से पूज्य बापू का स्वागत किया।

देशभर से विभिन्न समितियों द्वारा पूज्य बापू के ५४ वें जन्मदिवस पर विभिन्न समारोहों के आयोजन की सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं।

औरंगाबाद (महा.) समिति द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में आश्रम की साध्वी बहनों के सत्संग तथा पैठण में विशाल निःशुल्क नेत्र शिविर का आयोजन कर अनुभवी सर्जनों द्वारा तीस से अधिक मोतियाबिन्द पीड़ितों की सफल शल्यचिकित्सा कर उन्हें कान्टेक्ट लेंस वितरित किये तथा सैकड़ों लोगों के नेत्र परीक्षण करवाये। समिति द्वारा प्रतिमाह नेत्र शिविर का आयोजन कर १००१ लोगों के मोतियाबिंद रोग मिटाने का संकल्प लिया गया।

बड़े धनभागी हैं वे साधक जो अपने गुरुदेव द्वारा संचालित समाजसेवा की प्रवृत्तियों का निःस्वार्थभाव से विस्तार कर दीन दुःखियों की सहायता करते हैं।

इन्दौर युवा समिति द्वारा निःशुल्क छाछकेंद्र की स्थापना की गई। पीथमपुर (धार) में पूज्यश्री के जन्म महोत्सव पर विशाल संकीर्तन यात्रा का आयोजन कर निर्धन मजदूरों में मिठाई-प्रसाद वितरण किये गये।

सूरत आश्रम में पूज्यश्री का जन्म-महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। हजारों साधकों ने विशाल प्रभातफेरी का आयोजन कर सूरत की सड़कों पर हरिनाम की धूम मचा दी। बाद में समिति द्वारा विभिन्न अस्पतालों में मरीजों में औषध व फल वितरण किये गये। बड़ौदा समिति द्वारा भी इस दिन निःशुल्क छाछ वितरण केन्द्रों की स्थापना तथा स्वास्थ्य परीक्षण केन्द्र खोले गये।

इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद, आगरा, हृषीकेश, कानपुर, मध्य प्रदेश के उज्जैन, देवास, रायपुर, छिंदवाड़ा, जबलपुर, खरगौन, रतलाम, महाराष्ट्र के प्रकाशा, नासिक, पूना, पिंपरी, बम्बई, सोलापुर, गुजरात के राजकोट, भावनगर, वापी. दाहोद, गोधरा, मेहसाणा, विसनगर, बारडोली, राजस्थान के अजमेर, जोधपुर, जयपुर, पाली, भीलवाड़ा, बाँसवाड़ा, आमेट, उदयपुर, सुमेरपुर, सिरोही आदि स्थानों में एवं कलकत्ता, लुधियाना, चंडीगढ़, पानीपत, मद्रास, गौहाटी, इलाहाबाद आदि अनेकानेक शहरों की समितियों द्वारा पूज्य बापू के ५४ वें जन्म महोत्सव पर विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन के समाचार प्राप्त हुए हैं।

सच्चे गुरु से अधिक प्रेम बरसाने वाले, अधिक हितकारी, अधिक कृपालु और अधिक प्रिय व्यक्ति इस विश्व में मिलना दुर्लभ है।

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों एवं एजेन्ट बन्धुओं से अनुरोध

आत्मीय बन्धु !

आपको यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता होगी कि माह जुलाई 1995 से 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका नियमित मासिक रूप से प्रकाशित होगी। वर्तमान में प्रकाशित रंगीन मुखपृष्ठ के साथ पत्रिका का अंक यथावत दूसरे माह प्रकाशित होता रहेगा तथा बीच के माह का 'ऋषि प्रसाद' अंक सादा व सीमित पृष्ठों वाला होगा। वर्ष में सदस्यों को छः अंक रंगीन मुखपृष्ठवाली पत्रिका के रूप में तथा छः अंक सादे व सीमित पृष्ठों में मिलेंगे। सादे अंक में पूज्य बापू के सत्संग-वचनामृत, समितियों की सत्प्रवृत्तियों की जानकारी, साधना संबंधी पाठकों के प्रश्न व पूज्य बापू के उत्तर, पूज्य बापू के आगामी कार्यक्रमों की जानकारी, स्वास्थ्य संबंधी प्रश्नोत्तरी एवं माह के अनुकूल आहार का विवरण तथा पाठकों के पत्र प्रकाशित होंगे।

कागज एवं प्रिन्टिंग कार्य में निरन्तर मूल्यवृद्धि के कारण सदस्यता शुल्क में विवश होकर मामूली-सी वृद्धि करनी पड़ रही है। आशा है सेवाधारी एजेन्ट एवं 'ऋषि प्रसाद' के विद्वान पाठकबंधु पूर्ववत् स्नेह व सहयोग प्रदान करेंगे।

मूल्यवृद्धि एवं पत्रिका के मासिक प्रकाशन के बाद भी पाठकों के लिये विशेष सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। पाठक चाहें तो 'ऋषि प्रसाद' के मासिक अंक के भी सदस्य बन सकते हैं अथवा द्विमासिक संस्करण के सदस्य ही रह सकते हैं। दो में से किसी भी विकल्प को पाठक चुन सकते हैं।

सदस्यता शुल्क निम्नानुसार रहेगा :

(A) भारत, नेपाल व भूटान में

वार्षिक :	द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 30/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 40/-
आजीवन :	द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 300/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 400/-

(B) विदेशों में

वार्षिक :	द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 18
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 24
आजीवन :	द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 180
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 240

सदस्यता शुल्क की नई दरें तुरन्त ही प्रभावशील हो गई हैं अतः कृपया नये सदस्य इन्हीं दरों पर बनायें।

न्यूज पेपर स्टाल एवं हॉकरों को रिटेल सेल के लिये मात्र द्विमासिक संस्करण ही उपलब्ध रहेगा। एक प्रति का मूल्य Rs. 6/- रहेगा। इस गुरुपूर्णिमा विशेषांक का मूल्य Rs. 7/- है।

कृपया 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, अहमदाबाद के नये टेलिफोन नंबर नोट करें : 7486310, 7486702.

> गुरुपूर्णिमा पर्व पर 'ऋषि प्रसाद' के प्रचार-प्रसार एवं सदस्यता वृद्धि अभियान में अपनी सक्रिय भूमिका निभानेवाले सर्वोत्कृष्ट सेवाधारी एजेन्ट भाइयों को पुरस्कार एवं सम्मान की योजना 'अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति' द्वारा बनाई जा रही है।

(१) अपनी सदस्यता का नवीनीकरण कराते समय मनीआर्डर फार्म पर 'संदेश के स्थान' पर 'ऋषि प्रसाद के लिफाफे पर आया हुआ आपके पते वाला लेबल चिपका दें। (२) 'पाने वाले का पता' में 'ऋषि प्रसाद सदस्यता हेतु' अवश्य लिखें। (३) पते में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की सूचना प्रकाशन तिथि से एक माह पूर्व भिजवावें अन्यथा परिवर्तन अगले अंक से प्रभावी होगा। (४)'ऋषि प्रसाद' कार्यालय से पत्रव्यवहार करते समय कार्यालय के पते के ऊपर के स्थान में संबंधित विभाग का नाम अवश्य लिखें। ये विभिन्न विभाग इस प्रकार हैं :

(A) अनुभव, गीत, कविता, भजन, संस्था समाचार, फोटोग्राफ्स एवं अन्य प्रकाशन योग्य सामग्री 'सम्पादक-ऋषि प्रसाद' के पते पर प्रेषित करें। (B) पत्रिका न मिलने तथा पते में परिवर्तन हेतु 'व्यवस्थापक-ऋषि प्रसाद' के पते पर संपर्क करें।(C) साहित्य, चूर्ण, कैसेट आदि प्राप्ति हेतु 'श्री योग वेदान्त सेवा समिति' के पते पर संपर्क करें। (D) साधना संबंधी मार्गदर्शन हेतु 'साधक विभाग' पर लिखें। (E) स्थानीय समिति की मासिक रिपोर्ट, सत्प्रवृत्ति संचालन की जानकारी एवं समिति से संबंधित समस्त कार्यों के लिये 'अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति' के पते पर लिखें। (F) स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त प्रकार के पत्रव्यवहार 'वैद्यराज, सांई लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुजरात) के पते पर करें।

गुरुभक्तों की जब यह टोली निकली... चर्चा फैली गली-गली.... देखो-देखो सूरत की सड़कों पर...उतर आये हैं दीवाने हरिनाम के।
(पू. बापू के ५४ वें जन्म-महोत्सव पर... सूरत)

अजमेर (राज.) में पूज्यश्री के जन्म-महोत्सव पर झूमते गुरुनाम के दीवाने...

उदयपुर (राज.) में पू. बापू के ५४ वें जन्मोत्सव पर निकली संकीर्तन यात्रा...

कड़ैया (दमण, गुजरात) समिति द्वारा आयोजित संकीर्तनयात्रा का दृश्य...

पानीपत की सड़कें जब हरिनाम से गूँज उठी...

संकीर्तन के महान कार्य में भागीदार बन संत श्री आसारामजी आश्रम, प्रकाशा में महाप्रसाद पाते भक्तगण ।

सोलापुर (महा.) में निकली संकीर्तनयात्रा

हृषीकेश सत्संग के दौरान आश्रम द्वारा आयोजित आमरस भंडारे में प्रसाद ग्रहण करते साधु-संत एवं आमजनता।

दिल्ली चाँदनी चौक क्षेत्र में प्रभातफेरी का दृश्य।

बापू के ५४ वें जन्म-
सव पर महिला समिति,
ोप (अहमदाबाद) द्वारा
गया बालभोज समारोह।

पूज्य बापू के जन्म-महोत्सव पर निःशुल्क छाछकेन्द्र का लुत्फ उठाते सिद्धपुरवासी।

'श्रीआसारामायण' के पाठ व प्रभातफेरी में तन्मय होते मोल्याखेड़ी (मल्हारगढ़, म.प्र.) समिति के साधक।

बड़ौदा में पूज्यश्री के जन्म-महोत्सव पर हरिकीर्तन में झूमते बालक... उन्हें बालभोज भी दिया गया।

संकीर्तनयात्रा में प्रभुरस पीनेवालों को ठंडाई वितरण करने की सेवा खोजकर भी भक्त अपना सौभाग्य बना लेते हैं। (लुधियाना)

ुरु... ! तेरी याद सतावे...''
(लुधियाना) की धरती पर झूमती
ा बहनें।

सूरत में साधकों द्वारा संचालित मेडिकल केम्प।